शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 15 अंक : 1 1 अगस्त 2022

श्रावण-भाद्रपद मास, विक्रम संवत् 2079

संस्थापक
स्व. मुकुन्दराव कुलकर्णी

परामर्श
के.नरहरि
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल
शिवानन्द सिन्दनकेरा
जी. लक्ष्मण

सम्पादक
डॉ. राजेन्द्र शर्मा

सह सम्पादक
डॉ. शिवशरण कौशिक
भरत शर्मा

संपादक मंडल
प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय
डॉ. ओमप्रकाश पारीक
डॉ. एस.पी. सिंह

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी : **नौरंग सहाय**

कार्यालय प्रभारी : **आलोक चतुर्वेदी**

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राजस्थान) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 8920959986

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

वार्षिक शुल्क ₹ 250/-
दस वर्षीय शुल्क ₹ 2000/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

स्वतंत्रता आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका

❑ प्रो. अल्पना कटेजा

स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वाली महिलाओं की सूची कभी पूर्ण नहीं हो सकती। अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग करने वाली महिलाओं तथा अनेक कष्टों को झेलते हुए भी अपने परिजनों को आन्दोलन में भाग लेने हेतु प्रेरित करने वाली वीर महिलाओं का देश चिरऋणी रहेगा। भारतीय वाङ्मय में जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से भी बढ़कर बताया गया है। जो व्यक्ति अपने देश को अपनी जान से भी ज्यादा प्यार करते हैं, वे सभी वरेण्य हैं। भारत माँ को अपनी वीरांगनाओं पर सदैव गर्व रहेगा जिन्होंने जन्मभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। कृतज्ञ भारत उन्हें शतशत नमन करता है।

4

अनुक्रम

3. सम्पादकीय - डॉ. राजेन्द्र शर्मा
7. स्वतंत्रता आन्दोलन में महिला संगठनों की भूमिका - डॉ. ज्योत्स्ना भारद्वाज
10. क्रांतिज्योति सावित्रीबाई फुले : एक स्वतंत्रता सेनानी -डॉ. मीनल भोंडे
12. स्वतंत्रता संग्राम की कुछ विस्मृत वीरांगनाएँ - डॉ. सुषमा मिश्रा
17. स्वातंत्र्य यज्ञ की मौन समिधा - यशोदा गणेश... - डॉ. कल्पना पाण्डे
19. भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की साहसी वीरांगनाएँ - प्रो. सुषमा यादव
22. भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की... - दीप्ति चतुर्वेदी
24. स्वतंत्रता आंदोलन एवं नारी शक्ति - डॉ. सुमन बाला
27. स्वतंत्रता आंदोलन और महिलाएँ - रचना सक्सेना
29. क्रांतिकारी गतिविधियाँ और महिलाएँ - चन्द्र वीर सिंह भाटी
36. Spirit of Swadeshi and Swaraj Empowered... - Prof. Geeta Bhatt
38. Plural identities in the Indian National.... - Dr. Sindhu Poudyal
40. Literature and Tales of Freedom Struggle... - Dr. Aparna Das
42. शिक्षा : संत परंपरा और उसकी प्रासंगिकता - प्रो. सतीश कुमार

Women in Bharatiya struggle for Independence

❑ Dr. TS Girishkumar

The role of Bharatiya women towards Bharatiya struggle for independence shall be a saga in itself. Perhaps there may be no instance of sacrifice from any man in this context, without a greater sacrifice of women in some form or other associated with it. This could be only a mother who willingly encouraged her son to struggle for independence of Bharat against the encroached oppressors; this could be a wife who was much more than willing to risk her 'Mangalya-sutra'. This could be a sister who might.

33

संपादकीय

डॉ. राजेन्द्र शर्मा
सम्पादक

शिक्षा जगत के लिए जुलाई का माह विशेष महत्त्व का होता है। इसी माह में विभिन्न राज्यों के शिक्षा बोर्डों एवं सीबीएसई (केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड) के परीक्षा परिणाम घोषित हुए हैं और अब प्रवेश का कार्य चल रहा है। सीबीएसई एवं कई राज्यों के बोर्ड ने इस बार भी मेधा सूची (टॉपर सूची) घोषित नहीं करके अच्छा ही किया है। मेधा सूची से समग्रता में फायदे की तुलना में हानि ही अधिक होती है। वस्तुत: कोई भी परीक्षा परिणाम आखिरी नहीं होता है। ऐसे अनगिनत उदाहरण हैं जब एकाधिक परीक्षा में कम अंक लाने वाले या असफल रहने वाले छात्रों ने आगे चलकर बड़ी उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। परीक्षा परिणाम कमियों से सीखने एवं ज्यादा अच्छा प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित करने वाला पड़ाव है। अब यह देखना शिक्षा तंत्र की जिम्मेदारी है कि कमतर परिणाम दे रहे संस्थानों की कमियाँ दूर हो तथा बेहतर प्रदर्शन करने वाले विद्यालयों का विस्तार हो।

1977 से लगातार जुलाई माह में ही राष्ट्रपति का निर्वाचन एवं शपथ ग्रहण होता है। इस बार भी 25 जुलाई 2022 को सुबह 10:15 बजे संसद के केन्द्रीय कक्ष में जब आदरणीया द्रौपदी मुर्मू राष्ट्रपति पद की शपथ ले रही थी, तब पूरा देश भारतीय लोकतन्त्र की शक्ति एवं मजबूती पर गर्व महसूस कर रहा था और देख रहा था— एक गरीब पृष्ठभूमि की अंतिम पायदान की महिला को देश की प्रथम नागरिक बनते हुए। शपथ ग्रहण के पश्चात् अपने पहले सम्बोधन में उन्होंने कहा कि ''मेरा निर्वाचन इस बात का प्रमाण है कि भारत में गरीब सपने भी देख सकता है और उन्हें पूरा भी कर सकता है।'' द्रौपदी मुर्मू जी के राष्ट्रपति बनने से राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का सपना भी पूरा हुआ। गाँधी चाहते थे कि स्वतन्त्र भारत की प्रथम राष्ट्रपति कोई दलित महिला बने।

भारत की प्रथम आदिवासी महिला राष्ट्रपति की चर्चा के बाद अब बात महिलाओं के स्वतन्त्रता आंदोलन में योगदान की। नारी शक्ति ने भारत की संस्कृति और परम्परा को न केवल कायम रखा है अपितु वे धरोहर के रूप में उसे नई पीढ़ी को सौंप भी रही हैं। इतिहास साक्षी है कि महिलाएँ कुटुम्ब, समाज और देश के उत्थान के लिए सदैव जागरूक रही हैं और उन्होंने देश के प्रत्येक क्षेत्र में सराहनीय योगदान दिया है। स्वतन्त्रता आंदोलन में तो उनकी 1857 से ही सक्रिय भागीदारी रही है। 1857 का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम भारतीय इतिहास की एक युगान्तकारी घटना है जिसमें रानी लक्ष्मीबाई की तलवार की चमक अंग्रेजों ने देखी थी। स्वयं ह्यूरोज ने दूरबीन से महिलाओं को गोला-बारूद ढोते और तोप चलाते देखा तो दंग रह गया था।

स्वतन्त्रता आंदोलन में भारी संख्या में महिलाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। वे खादी और चरखे को लोकप्रिय बनाने के लिए गली-गली घूमी, जुलूस निकाले, शराब की दुकानों पर धरने दिये, विदेशी कपड़ों की होली जलाई, स्वदेशी को अपनाया भी और उसका प्रचार-प्रसार भी किया। उन्होंने जेल जाने और लाठी खाने का भय भुलाकर प्रदर्शनों का आयोजन किया और दिखा दिया कि वे शक्ति और सामर्थ्य में किसी से कम नहीं है। 1848 में देश में प्रथम महिला विद्यालय की स्थापना करने वाली सावित्री बाई फुले, 'वंदेमातरम्' नामक क्रान्तिकारी पत्र का प्रकाशन करने वाली व भारतीय क्रान्ति की माता की उपाधि से विभूषित भीकाजी रूस्तम कामा, इंडियन पब्लिक आर्मी (आईआरए) की गतिविधियों में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करने वाली प्रीतिलता वाडेकर एवं कल्पना दत्त, कलकत्ता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में उपाधि ग्रहण करते समय गवर्नर स्टैनले जैक्शन पर गोली चलाने वाली बीना दास, धरासना के नमक भण्डार पर धावा बोलने वाले सत्याग्रहियों का नेतृत्व करने वाली भारत कोकिला सरोजनी नायडु, अरूणा आसफ अली और उषा मेहता के साथ भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाने वाली सुचेता कृपलानी, 1944 में पूना के आगा खाँ महल (जेल) में नश्वर देह को छोड़ने तक गाँधी का पल-पल साथ देने वाली कस्तूरबा गाँधी, अगस्त आंदोलन के दौरान हाथ और सिर पर गोली लगने के बावजूद भारतीय झंडे को नीचे नहीं गिरने देने वाली वीरांगना मातंगिनी हजारा और उन जैसी अन्य आंदोलनकारियों के प्रयासों से यह आंदोलन आम जन का आंदोलन बनता चला गया। नागालैण्ड की क्रान्तिकारी नेत्री रानी गाइडिन्ल्यू को कौन विस्मृत कर सकता है जिन्होंने विद्रोही नागाओं की विशाल फौज खड़ी कर विदेशी शासन के विरुद्ध विद्रोह का झंडा उठाया और स्वतन्त्रता के काज के लिए अपनी पूरी जवानी जेल में बिता दी थी। अंतरिम सरकार के गठन के पश्चात ही वे जेल से रिहा हुई। भारतीय मठ परम्परा को स्वीकारने वाली प्रथम पाश्चात्य महिला भगिनी निवेदिता का तो सम्पूर्ण जीवन ही एक ऐसे दीपक की तरह रहा जिसने स्वयं जलकर हमें ज्योति दी और हमारे हृदयों में स्वतन्त्रता एवं जागृति का आलोक फैलाया। इसी तरह सुभद्राकुमारी चौहान जब ''बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी.....'' कविता सुनाती थी तो लोगों में स्वत: ही राष्ट्र प्रेम की भावना जाग उठती थी। नि:संदेह ऐसी हजारों और भी है जिनका उल्लेख नहीं कर पाने के लिए क्षमा याचना करते हुए इस अंक के माध्यम से शैक्षिक मंथन परिवार स्वतन्त्रता आंदोलन की सभी महिला आंदोलनकारियों के प्रति हार्दिक सम्मान एवं श्रद्धा प्रकट करता है। ❑

स्वतंत्रता आन्दोलन में महिलाओं की भूमिका

प्रो. अल्पना कटेजा
अर्थशास्त्र, सिंडीकेट सदस्य,
निदेशक, यूजीसी,
मानव संसाधन विकास केन्द्र,
राजस्थान विश्वविद्यालय

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में कई वीरांगनाओं ने सक्रिय रूप से भाग लिया, त्याग और बलिदान देकर माँ भारती को अंग्रेजों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर किया। यद्यपि इतिहास सभी के साथ न्याय नहीं कर पाता और कई महिला क्रान्तिकारियों का मात्र उल्लेख भर मिलता है, अनेक नामों की जानकारी भी हमें नहीं है, इसका एक प्रमुख कारण यह है कि बड़ी संख्या में महिलाओं ने गुप्त रूप से क्रान्ति में भाग लिया और क्रान्तिकारियों की सहायता विविध रूप में यथा - सन्देश पहुँचाने, गोला-बारूद, हथियार इत्यादि इधर-उधर लाने ले जाने, तोपचियों की मदद करने, क्रान्तिकारियों को भोजन पहुँचाने, घायलों की सेवा-शुश्रूषा का कार्य करने एवं गुप्त आश्रय देने के रूप में की। आवश्यकता पड़ने पर शस्त्र धारण करके युद्ध के मैदान में जाने और प्राणों का उत्सर्ग करने वाली निर्भय महिलाओं की भी एक लम्बी शृंखला है।

रानी लक्ष्मीबाई

1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने पराक्रम की पराकाष्ठा का प्रदर्शन कर ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को नाकों चने चबवा दिये थे। रानी ने भारत की स्वतंत्रता की मशाल लेकर अल्पायु में ही हँसते-हँसते अपने प्राण न्योछावर कर दिये। अद्वितीय पराक्रम वाली रानी में कूट-कूट कर भरे मातृभूमि प्रेम के साथ ही बुद्धिकुशलता, शौर्य, सिपाहियों के प्रति असीम उदारता, कठिन समय में अडिग धीरज, युद्धभूमि में रणनीति बनाने की कला जैसे सद्गुण उन्हें 'मर्दानी' की दर्जा दिलाते हैं। वीरांगनाओं में अग्रगण्य रानी को कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने इन शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित की है -

''रानी गई सिधार, चिता
अब उसकी दिव्य सवारी थी।
मिला तेज से तेज,
तेज की वह सच्ची अधिकारी थी।
उम्र अभी कुल तेईस की थी,
मनुज नहीं अवतारी थी।
हमको जीवित करने आई,
बन स्वतंत्रता-नारी थी।
दिखा गई पथ, सिखा गई हमको
जो सीख सिखानी थी।
बुन्देले हरबोलों के मुँह,
हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो,
झाँसी वाली रानी थी।''

कुमारी मैना देवी

नाना साहब की प्रिय पुत्री मैना देवी ने अपने पिता से जन्मभूमि की आन-बान-शान के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा ली। मैना देवी की दुखभरी रोमांचकारी कहानी अंग्रेजों की बर्बरता की जीती-जागती तस्वीर है। मैना देवी के पीछे लगकर एक

दिन धोखे से उसे पकड़ लिया गया। अपने साथियों के नाम न बताने पर उसके हाथ-पैर बाँध कर अंग्रेजों ने उसे जीवित जला दिया, सम्भवतः यह सोचकर कि नाना साहब उसकी मौत से दुखी होकर चुप बैठ जायेंगे किन्तु उसकी शहादत ने आग में घी का काम किया और मैना देवी की जान की कीमत उन्हें हजारों अंग्रेजों की मौत के रूप में चुकानी पड़ी।

भीमाबाई

वीरहृदया और महान् देशभक्त भीमाबाई ने जिस प्रकार 1857 में अंग्रेजों के साथ युद्ध करके अद्‌भुत वीरता का प्रदर्शन किया, उन्हें दूसरी लक्ष्मीबाई कहा जाने लगा। जिस समय अंग्रेज देशी राजाओं को आपस में लड़ा कर चालाकी से अपने राज्य का विस्तार करते जा रहे थे, मध्य भारत में स्थित होल्कर राज्य वीर जसवंत के हाथों शक्तिशाली स्थिति में था किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् राज्य की बागडोर मल्हारराव के हाथों में आई तो अंग्रेज उनके राज्य को हड़पने का षड्यंत्र करने लगे। तब मल्हारराव ने अपनी बहन भीमाबाई की सहायता से होल्कर की बहुत बड़ी और संगठित सेना तैयार कर ली। एक समय जब मल्हारराव विवश होकर अंग्रेजों से सन्धि कर इन्दौर में फौज की छावनी बनाने को तैयार हो गये, तब उनकी बहन भीमाबाई ने युद्ध किया और इन्दौर में फौज की छावनी नहीं बनने दी।

जैतपुर की रानी

जैतपुर बुन्देलखण्ड की एक छोटी सी रिसायत थी जिसके राजा परीक्षित की मृत्यु के बाद उनकी रानी ने अंग्रेजों की विस्तारवादी नीतियों का सामना करने की ठानी। 1857 की क्रान्ति के समय रानी ने स्थानीय ठाकुरों के सहयोग से मालवा, बानपुर और शाहगढ़ आदि स्थानों पर विद्रोह का झण्डा फहरा दिया। दुर्भाग्यवश देश के कुछ दुश्मनों और जयचन्दों की वजह से उन्हें अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हो सकी।

रानी अवन्तीबाई

मध्यप्रदेश के मंडाला जिले में रायगढ़ नामक रियासत भी अंग्रेज वायसराय डलहौजी की दुर्नीति का शिकार हुई तब रानी अवन्तीबाई लोधी ने स्वजाति प्रमुख लोगों को गुप्त सन्देश भेजकर विद्रोह के लिए इकट्ठा किया और छापामार प्रणाली से जंगलों से युद्ध संचालन किया। रानी के पास न तो अंग्रेजों के समान संगठित सेना थी और न ही विशाल आधुनिक शस्त्रागार। किन्तु दृढ़ निश्चय वाली वीरागंना में स्वाभिमान की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी अतः उसने अंग्रेजों के हाथों मरने की अपेक्षा स्वयं अपनी जान देना उचित समझा। अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए उसने अपनी ही तलवार से अपना सीना चीर कर इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करवा लिया।

रानी द्रौपदी बाई

मध्य भारत की एक छोटी सी रियासत धार की रानी थी द्रौपदी बाई, जिन्होंने अंग्रेज सरकार की खुशामद करके ऐशो आराम का जीवन जीने के बजाय उनसे लोहा लिया और यह सिद्ध कर दिया कि भारत की वीरागंनाओं में रणचण्डी और दुर्गा का ही रक्त प्रवाहित होता है। रानी ने फिरंगियों की इच्छा के विरुद्ध देशी वेतन भोगी सैनिकों की नियुक्ति की, क्रान्तिकारियों को हरसम्भव सहायता पहुँचाई। लगातार विद्रोह के लिए प्रेरणा देकर अंग्रेजों के लिए चुनौती बनी रहीं।

रानी तेज बाई

1842 ई. में जालौन राज्य को ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपने अधीन कर रानी को पेन्शन दे दी थी। अपनी सीमित शक्ति के कारण तब रानी ने अपमान का घूँट पी लिया किन्तु 1857 के संग्राम में अनेक क्रान्तिकारियों को प्रेरित करके एवं मदद करके उन्होंने उनका हौसला बढ़ाया था। अप्रत्यक्ष रूप से 1857 के संग्राम में भाग लेने के आरोप में उन्हें 12 वर्ष का कारावास दिया गया।

रानी चेन्नम्मा

1857 ई. से पूर्व जिन महिलाओं ने स्वतंत्रता आन्दोलन में महती भूमिका अदा की, उनमें किटूर (कर्नाटक) की रानी चेन्नम्मा का नाम अग्रणी है। इस देशभक्त महिला ने अंग्रेजों के विरुद्ध बिगुल

बजाकर समस्त नारी जाति में देशभक्ति की भावना का संचार किया।

मैडम कामा

सम्पन्न घराने में जन्मी, अंग्रेजी में सुशिक्षित, महान क्रान्तिकारिणी मैडम कामा ने विदेश मे रहकर कठिन दुखों को झेलते हुए महाक्रान्ति के मार्ग पर चलने का कठोर निर्णय लिया था। मैडम कामा ने इग्लैण्ड, रूस, मिस्त्र, जर्मनी और आयरलैण्ड के क्रान्तिकारियों के साथ अपने सैन्य सम्बन्ध स्थापित किए। उन्होंने फ्रांस में रहकर भारत के क्रान्तिकारियों के पास बड़ी होशियारी से छिपाकर हथियार भेजे। तिरंगे की कल्पना एवं तिरंगे को अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर गौरव दिलाने का श्रेय मैडम कामा को ही जाता है। कामा ने 'वन्देमातरम्' नामक पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया था जो कई भाषाओं में छपता था। उसकी बहुत सी प्रतियाँ भारत भेजी जाती थीं। उन्होंने भाषणों, परचों एवं विज्ञप्तियों के प्रकाशन के माध्यम से भारतवासियों को एकता एवं अंग्रेजी वस्तुओं का बहिष्कार करने के लिए लगातार प्रेरित किया। भारत के क्रान्तिकारी और देशभक्त जब पेरिस जाते, वे कामा के पास ही ठहरते और मैडम उनकी हर प्रकार से सहायता करती थीं। अर्थाभाव एवं विपरीत परिस्थितियों में

स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वाली महिलाओं की सूची कभी पूर्ण नहीं हो सकती। अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग करने वाली महिलाओं तथा अनेक कष्टों को झेलते हुए भी अपने परिजनों को आन्दोलन में भाग लेने हेतु प्रेरित करने वाली वीर महिलाओं का देश चिरऋणी रहेगा। भारतीय वाङ्मय में जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से भी बढ़कर बताया गया है। जो व्यक्ति अपने देश को अपनी जान से भी ज्यादा प्यार करते हैं, वे सभी वरेण्य हैं। भारत माँ को अपनी वीरांगनाओं पर सदैव गर्व रहेगा जिन्होंने जन्मभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। कृतज्ञ भारत उन्हें शतशत नमन करता है।

लगातार काम करने से उनका स्वास्थ्य खराब हो गया और 1936 में ही मैडम कामा का स्वर्गवास हो गया।

बेगम जीनत महल

मुगल साम्राज्य के अन्तिम बादशाह बहादुरशाह जफर की बेगम थीं मलिका जीनत महल। उनमें अच्छी प्रशासिका के सभी गुण विद्यमान थे। जब बूढ़े बादशाह ने ब्रिटिश हुकूमत का नेतृत्व स्वीकार करने की सोची तो बेगम ने धिक्कारते हुए उन्हें गजलों से दिल-बहलाने के बजाय कर्तव्य पालन के लिए प्रेरित किया। इसी प्रकार अवध के नवाब वाजिद अली शाह की बेगम हजरत महल ने भी क्षत्राणियों की भाँति अपने सैनिकों के उत्साहवर्धन और क्रान्तिकारियों के मनोबल को बढ़ाने के लिए कई कार्य किये।

अन्य क्रान्तिकारी महिलाएँ

आजादी के संघर्ष में अपूर्व योगदान देने वाली क्रान्तिकारी महिलाओं में सुभाष चन्द्र बोस की आजाद हिन्द फौज में सराहनीय योगदान देने वाली कैप्टन लक्ष्मी का नाम उल्लेखनीय है जिनके नेतृत्व में 'महिला रेजीमेन्ट-रानी झाँसी' ने अंग्रेजों से जमकर संघर्ष किया।

सुचेता कृपलानी के 'भूमिगत स्वयं सेवक दल', एनीबेसेन्ट के 'वीमेन्स इण्डियन ऐसोसिएशन', अरूणा आसफ अली के 'इंकलाब' पत्र ने भारतीय जनमानस में विदेशी हुकूमत की दमनकारी नीतियों के विरोध में चेतना जाग्रत कर अपनी अमूल्य सेवाएँ दीं। स्वदेशी आन्दोलन में अपनी रचनाओं द्वारा जनता में देशप्रेम की भावना जाग्रत करने में सुभद्रा कुमारी चौहान और संस्कृत कवयित्री पंडिता क्षमाराव को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

अन्य महिलाओं में राजकुमारी अमृतकौर, सुशीला नैय्यर, सुनीति चौधरी, शान्ति घोष, वीणा दास, नन्दिनी सतमथी, मणि बेन पटेल, पदमजा नायडू का उल्लेख किये बिना स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास अधूरा रह जाता है, जिन्होंने जुलूस निकाले, विदेशी वस्त्रों की होलियाँ जलाईं, राजद्रोह के अपराध में जेल यात्राएँ की, लाठियों के प्रहार सहे किन्तु हर हाल में अंग्रेजों का डटकर मुकाबला किया।

स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वाली महिलाओं की सूची कभी पूर्ण नहीं हो सकती। अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग करने वाली महिलाओं तथा अनेक कष्टों को झेलते हुए भी अपने परिजनों को आन्दोलन में भाग लेने हेतु प्रेरित करने वाली वीर महिलाओं का देश चिरऋणी रहेगा। भारतीय वाङ्मय में जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से भी बढ़कर बताया गया है। जो व्यक्ति अपने देश को अपनी जान से भी ज्यादा प्यार करते हैं, वे सभी वरेण्य हैं। भारत माँ को अपनी वीरांगनाओं पर सदैव गर्व रहेगा जिन्होंने जन्मभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया। कृतज्ञ भारत उन्हें शतशत नमन करता है। ❑

स्वतंत्रता आन्दोलन में महिला संगठनों की भूमिका

डॉ. ज्योत्स्ना भारद्वाज
अध्येता राजनीति विज्ञान,
पूर्व संयुक्त निदेशक,
राजस्थान उच्च शिक्षा विभाग,
जयपुर (राज.)

भारतीय हिन्दू समाज में स्त्री को ज्ञान, शक्ति एवं सम्पत्ति का प्रतीक माना गया है। इन प्रतीकों के रूप में हिन्दी समाज नारी रूप, सरस्वती, दुर्गा, लक्ष्मी की पूजा करता है। समाज में स्त्री को पुरुष का आधा अंग माना गया है, उसे अर्धांगिनी के रूप में सम्मान जनक स्थान दिया गया है। किसी भी कार्य की पूर्ति नारी के बिना संभव नहीं है। उसकी भूमिका का आकलन इस रूप में किया गया है। नारी परिवार की नींव है, परिवार समुदाय की, समुदाय राष्ट्र की। राष्ट्र पर होने वाला किसी भी प्रकार का आघात प्रत्यक्षत: नारी को आहत करता हैं। इस रूप में परिवार, समाज, राष्ट्र का विकास तब तक संभव नहीं है, जब तक महिला की क्रियाशीलता एवं सकारात्मक सहभागिता नहीं है।

भारत के संदर्भ में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सभी क्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका प्रभावी रही है, उसकी क्रियाशीलता के आयाम परिवार, समाज व राष्ट्र के स्तर पर परिलक्षित हैं। भारत में ऐतिहासिक साक्ष्यानुसार प्रारम्भिक काल में महिलाओं की सहभागिता एवं गतिशीलता का दायरा सीमित था। प्राचीन काल एवं मध्यकाल में महिला की स्थिति निर्णायक नहीं थी। अनेक बंधनपाश, कुरीतियों, रूढ़ियों ने उसके सोच को, उसकी भूमिका को प्रभावित किया। धीरे-धीरे भारत में सामाजिक, आर्थिक सुधार आन्दोलन, ईसाई मिशनरियों द्वारा शिक्षा का प्रसार, ब्रिटिश सरकार की उदारवादी प्रशासनिक नीति के कारण महिलाओं में जागरूकता आई। 1857 की क्रांति के पश्चात् हिन्दुस्तान की धरती पर हो रहे परिवर्तनों से एक ओर नवजागरण का प्रस्फुटन हुआ। दूसरी ओर विभिन्न सुधार आन्दोलनों एवं आधुनिक मूल्यों के विस्तार से रूढिवादी मूल्यों का बिखराव हुआ। हिन्दू समाज के बंधन ढीले पड़ने लगे। पुरुष वर्ग की मानसिकता बदलने लगी, महिला की कार्यक्षमता की आवश्यकता महसूस होने लगी। भारतीय समाज की महिला चूल्हे-चौके, घर की चारदीवारी से निकलकर उन्मुक्त आकाश की ओर बढ़ने लगी उसकी स्वयं की सोच, क्रियाशीलता, उसकी क्षमता, उसकी भूमिका, नई परिभाषा की तलाश करने लगे, उसके विचार एवं क्रियाशीलता के आयाम् बदलने लगें, भूमिका के दायरे बदल गये। 'स्व' की पहचान का भाव जाग्रत हुआ, अपनी अस्मिता का भान हुआ, इसी भाव से प्रेरित होकर महिला समुदाय संगठित होकर पुरुष वर्ग के साथ सहयोगी बन गया।

भारत की सचेत नारी, जीवन के हर क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभाने लगी। 18वीं, 19वीं सदी में अंग्रेजी शासन का विस्तार हुआ, अंग्रेजी शासन का विरोध एवं देश की स्वतंत्रता के लिए संग्राम छिड़ने लगे, इस माहौल में महिलाओं की स्थिति की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। राष्ट्र निर्माण एवं स्वशासन की स्थापना के लिए भारतीय नारी की छवि एवं भूमिका के आकलन के आयाम्

बदलने लगे। ब्रिटिश सरकार ने अपने शासन को न्यायोचित बनाने के लिए भारत में प्रचलित कुरीतियों को उजागर करना शुरू किया, दूसरी ओर भारतीय नेताओं और धर्म शास्त्रियों ने यह साबित करने का प्रयास किया की भारतीय परम्परा में महिलाओं को प्रारम्भ से ही उच्च स्थान मिलता आया है। तर्क-वितर्क के मध्य कुछ प्रान्तों में समाज सुधार की लहर फैल गयी तथा राष्ट्रवादियों ने महिलाओं की स्थिति को सुधारने के उपाय सुझाए, उनकी भूमिका को प्रभावी बनाने के तरीके तलाशे जाने लगे। साथ ही ब्रिटिश साम्राज्य को उखाड़ फेंकने के प्रयास तीव्र हुए, इस प्रवाह में महिलाओं को जोड़ने का प्रयास प्रारम्भ हुआ।

1857 से 1947 तक ब्रिटिश शासन को समाप्त करने के अन्तिम उद्देश्य के साथ ऐतिहासिक श्रृंखला का नाम स्वतंत्रता आन्दोलन दिया गया। भारतीय जनमानस के समक्ष एक ही लक्ष्य था ब्रिटिश साम्राज्य को समाप्त कर स्वशासन की स्थापना। इस लक्ष्य में स्त्री व पुरुष समान रूप से संघर्षरत रहे। ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने में एक ओर स्वतंत्रता आन्दोलन गति पकड़ रहा था, वहीं दूसरी ओर हिन्दू समाज को संगठित एवं विकसित करने में पुरुषों के साथ महिला संगठन क्रियाशील थे।

1857 में झांसी की रानी एवं लखनऊ की बेगम हजरत महल द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य का विरोध स्वतंत्रता आन्दोलन में महिलाओं की सजग सहभागिता के प्रतीक थे, 1885 में कांग्रेस स्थापना के साथ ही महिलाओं की सहभागिता प्रभावी रही। 1890 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन भारत की पहली महिला कादंबिनी गांगुली ने अधिवेशन को संबोधित किया। एनीबिसेंट, सरोजनी नाइडू ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का नेतृत्व किया और संगठनात्मक रूप में महिला सहभागिता को हस्ताक्षरित किया गया। महिलाओं द्वारा अनेक संगठन स्थापित कर महिलाओं को जोड़ने का प्रयास किया, जिसकी पूर्ण आहुति स्वतंत्रता आन्दोलन में अंकित थी।

इस काल में सावित्री बाई फूले, रमाबाई, फ्रांसिना सोराब जी, स्वर्ण कुमारी की भूमिका प्रमुख रही। इन्होंने अनेक संगठन स्थापित किये। हिन्दू समाज को जाग्रत करने का प्रयास किया। 1848 में सावित्री बाई ने पति ज्योतिराव के साथ मिलकर पूना में लड़कियों के लिए पहला स्कूल खोला। 1851 में दूसरा, 1953 में तीसरा स्कूल खोलकर महिला शिक्षा का प्रसार किया। सावित्री बाई ने रोग निवारण केन्द्रों का संचालन किया। महाराष्ट्र में 'सत्य शोधित समाज' की स्थापना की।

1882 में रमाबाई ने 'आर्य महिला समाज' 'सेवासदन नर्सिंग एण्ड मेडिकल एसोसिएशन' स्थापित किया। 1889 में विधवाओं के लिए 'शारदा सदन' गृह एवं स्कूल बम्बई में खोले, 1900 तक रमाबाई ने 'मुक्ति सदन' नामक ग्रामीण संस्था खोली, जिसके माध्यम से महिलाओं को खेतीबाड़ी से जोडने का कार्य किया। 1892 में स्वर्ण कुमारी देवी ने 'सखी-समिति' का गठन किया। 1901 में सरला देवी चौधरी ने अखिल भारतीय स्तर का 'भारत स्त्री महामण्डल' बनाया। 1907 में सूरत में नानी बेन गज्जर तथा बाजी गौरी मुंशी ने विधवाओं के लिए संस्था बनाई। सुलोचना देसाई ने अहमदाबाद में 'सरस्वती मंदिर संस्था' बनाई। 1916 में 'भगनी समाज' की स्थापना हुई। इन संगठनों के माध्यम से महिलाओं को वो मंच प्राप्त हुआ जिसके साथ जुड़कर अपनी समस्याएँ, विचार साझा किये जाते थे साथ ही महिलाओं में शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ जिससे चेतना का प्रसार संभव हो पाया।

1917 में एनीबिसेंट ने मद्रास में महिला संगठन 'वीमेन्स इण्डियन एसोसिएशन' की स्थापना की। 1920-21 में 'राष्ट्रीय स्त्री सभा' और कलकत्ता में बसन्ती देवी, उर्मिला देवी, सुनीता देवी ने 'नारी कर्ममंदिर' की स्थापना की।

महिला संगठन के क्रम में 1926 में अखिल भारतीय महिला परिषद बनाई गई। 1934 में 'ज्योति संघ' बना, जिसने महिला शक्ति को काम में लाये जाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस काल में अन्य महिला संगठन कार्यरत रहे। 'भारतीय स्त्रीमण्डल पूना सेवा सदन', 'सरोजनी दत्त महिला संघ', 1929 में विभिन्न महिला संगठनों ने मिलकर 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' का गठन किया, इसका प्रथम अधिवेशन पूना में आयोजित किया गया, जिसमें महिलाओं की सामाजिक, राजनीतिक मांगों को जोरदार, तरीके से उठाया गया। इस संस्था की संस्थापकों में कमला देवी चट्टोपाध्याय, नेली सेन गुप्ता, सरोजनी

भारत की सचेत नारी, जीवन के हर क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभाने लगी। 18वीं, 19वीं सदी में अंग्रेजी शासन का विस्तार हुआ, अंग्रेजी शासन का विरोध एवं देश की स्वतंत्रता के लिए संग्राम छिड़ने लगे, इस माहौल में महिलाओं की स्थिति की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। राष्ट्र निर्माण एवं स्वशासन की स्थापना के लिए भारतीय नारी की छवि एवं भूमिका के आकलन के आयाम् बदलने लगे। ब्रिटिश सरकार ने अपने शासन को न्यायोचित बनाने के लिए भारत में प्रचलित कुरीतियों को उजागर करना शुरू किया, दूसरी ओर भारतीय नेताओं और धर्म शास्त्रियों ने यह साबित करने का प्रयास किया की भारतीय परम्परा में महिलाओं को प्रारम्भ से ही उच्च स्थान मिलता आया है। तर्क-वितर्क के मध्य कुछ प्रान्तों में समाज सुधार की लहर फैल गयी तथा राष्ट्रवादियों ने महिलाओं की स्थिति को सुधारने के उपाय सुझाए, उनकी भूमिका को प्रभावी बनाने के तरीके तलाशे जाने लगे।

नाइडू, राजकुमारी अमृत कौर, पिरोज बाई, फिरोजशाह मेहता, अनुसुइया मुख्य प्रणेता रहीं।

हिन्दू संगठनों के साथ मुस्लिम संगठनों का भी गठन किया गया, जिससे स्वतंत्रता संग्राम सुदृढ़ हुआ। 1869 में लाहौर में द अंजुमन-इ-हिमायत-इ इस्लाम ऑफ लाहौर की स्थापना की गई।

1901-02 में हैदराबाद में 'लेडीज एसोसिएशन' की स्थापना हुई। 1914 में अलीगढ़ में 'द आल इण्डिया मुस्लिम लेडीज कॉन्फ्रेंस' की स्थापना हुई। इन संगठनों का उद्देश्य शिक्षा व मुस्लिम महिलाओं के वाजिब अधिकार दिलाना था। अखिल भारतीय स्तर पर कार्य करने वाले महिला संगठनों में विश्वविद्यालय संघ, 'महिलाओं की राष्ट्रीय समिति', 'कस्तूरबा गाँधी राष्ट्रीय स्मारक सामिति', ईसाई 'नवयुवती समिति' प्रमुख रहे। इन संगठनों की सक्रिय क्रियाशीलता ने समय-समय पर स्वतंत्रता आन्दोलन के घटना क्रम को प्रभावित किया। इसी काल में बंगाल में 'स्त्री आत्मरक्षा समिति', 'मुस्लिम स्त्री सेल्फ डिफेंस' का गठन किया गया, लतिका घोष ने 'महिला राष्ट्रीय संघ' की स्थापना की इस काल में लतिका को सुभाष चन्द्र बोस का सानिध्य प्राप्त था। मास्टर सूर्य सेन के नेतृत्व में कल्पनादास, प्रीति लता वाडेकर ने क्रांतिकारी गतिविधियों में भाग लिया, इसी काल में लीलानाग ने 'दीपावली संघ' की स्थापना की, इस संघ द्वारा युवतियों को शस्त्र-चलाने व बम बनाने का प्रशिक्षण दिया गया। गाँधीवादी काल में पार्वती देवी बाई, अरूणा आसफ अली, शाम देवी, सुभद्रा कुमारी चौहान, कमला नेहरू, मणिबेन भाई पटेल, विजयलक्ष्मी पण्डित, दुर्गाबाई देशमुख, सुशीला नैयर, महिलाओं की भूमिका प्रमुख थी। इस काल में 'कुमारी सभा संगठन' प्रभावी था।

1942 में उषा मेहता ने गुप्त रेडियो का संचालन कर आन्दोलनकारियों The College Girl who ran a Secret Radio Station का मार्ग दर्शन किया। 'बानरी सेना during the QUIT INDIA की स्थापना की। स्वतंत्रता संग्राम के MOVEMENT अन्तिम चरण में महिलाओं को लामबन्द करने के लिए महिला Usha Mehta संस्थाएँ गठित हुई, इनमें प्रमुख थी 25th MARCH.

'देश सेविका संघ', 'नारी सत्याग्रह समिति', 'स्त्री स्वराज्य संघ' आदि इन संस्थाओं ने स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाई। स्वतंत्रता आन्दोलन के कई दशकों में महिलाएँ शामिल हुई। अधिकांश मध्यम वर्ग की महिलाएँ शामिल हुई, किन्तु श्रमिक व निम्न वर्ग की महिलाएँ भी भारी तादाद में शामिल थी। इनमें से एक थी जग्गी देवी जो अवध के किसान सभा की नेत्री थी। इन्होंने किसान सभा के साथ ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ने के लिए महिलाओं को प्रेरित किया। किसान सभा के साथ-साथ 'किसानिन सभा' की स्थापना की गई।

इस रूप में भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में समाज के प्रत्येक तबके की महिलाओं ने अपनी आहुति दी। संगठनों के माध्यम से महिला समाज को संगठित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, पूर्ण आहुति तभी संभव हो पाई जब ब्रिटिश शासन का अन्त हुआ और हमारा अपना स्व-शासन स्थापित हुआ। हमारा अपना विचार, उड़ान का अपना आकाश, अपना कानून बना। वास्तव में तभी 'स्व' की स्थापना सम्भव हो पायी। ❑

क्रांतिज्योति सावित्रीबाई फुले : एक स्वतंत्रता सेनानी

डॉ. मीनल भोंडे

प्राचार्य,
महात्मा ज्योतिबा
फुले महाविद्यालय
अमरावती (महाराष्ट्र)

विद्या बिन तो मति गई,
मति बिन गई नीति
नीति बिन गई गति,
गति बिन गया वित्त।।
वित्त बिना टूट गया शुद्र,
अविद्या ने किये ऐसे अनर्थ।।

शिक्षा की दृष्टि से उपर्युक्त विचार को अहमियत रखते हुए क्रांतिसूर्य महात्मा जोतीराव फुले का कार्य जितना महान है उतना ही महत्त्वपूर्ण योगदान क्रांतिज्योति सावित्रीबाई फुले का भी रहा है। महात्मा फुले के विचार, उनकी स्मृतियाँ सावित्रीबाई के बिना अधूरे है। सावित्रीबाई भारत की आद्य महान क्रांतिकारी महिला थीं। सहभोजन, छुआछूत निवारण, रोटी-बेटी व्यवहार, अनाथ व्यक्ति तथा बालकों के लिए सुरक्षा गृह, कुमारी मातृत्व, प्रौढ कुमारी विवाह, विधवा - केशवपन बंदी, बालहत्या प्रतिबंध, पुनर्विवाह, और नारी शूद्र शिक्षा जैसी कई समस्याओं को सुलझाने में उन्होंने जोतीराव का सक्रिय साथ दिया।

जोतिबा फुले के समान ही उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले भी अनेक कष्ट सहन करते हुए, समाज की प्रताडनाएँ सहते हुए, स्वयं शिक्षित हुई और भारत की प्रथम अध्यापिका का गौरव हासिल कर लिया। उन्होंने नारी शिक्षा आन्दोलन हेतु स्वयं को समर्पित कर दिया।

19 वीं सदी में सार्वजनिक जीवन को अपनाने वाली प्रथम भारतीय महिला का गौरव भी उन्हें ही प्राप्त है। सावित्रीबाई न केवल जोतिबा फुले की अर्धांगिनी थीं, वरन उनके क्रांतीकारी आन्दोलनों की भी अर्धांगिनी बन गयी थी। जोतिबा फुले के समान ही सावित्री बाई फुले भी धैर्य, समर्पण एवं दूरदृष्टि जैसे अलौकिक गुणों की स्वामिनी थी। उन्हें नारी सेवा के लिए अपना घर, बच्चे एवं सभी सुखों का त्याग कर कांटों भरे रस्तों पर चलना पड़ा था ।

सावित्रीबाई फुले मात्र स्त्री शिक्षा आन्दोलन तक ही सीमित न रही। उनका लक्ष्य स्त्रियों का चहुँमुखी विकास करना था। जोतिबा द्वारा खोले गये विधवाश्रम व अनाथाश्रम की देखरेख सावित्रीबाई फुले करती थी। जोतिबा के निधन के बाद उनके द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज की बागडोर वर्ष 1891 ई. से 1897 ई. तक सावित्रीबाई ने संभाली। इन सात वर्ष के कार्यकाल में अनेक सभा सम्मेलनों में जाकर कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन किया तथा सम्बन्धित संस्थाओं का कुशल संचालन भी किया। वे बुद्धिमान लेखिका तथा प्रतिभा संपन्न कवयित्री भी थी। उनके द्वारा कृत कविता संग्रह काव्य फुले, 1854 ई. में प्रकाशित हुई थी।

सावित्रीबाई फुले को इस तरह तत्कालीन वातावरण के विरुद्ध कार्य करते देख उनके भाई व पीहर के अनेक लोगों ने भी मना किया था। किन्तु सावित्रीबाई ने

किसी की बात न सुनी और अपने पति जोतिबा फुले के साथ निरंतर कार्य करती रही। अपने पति से कहती थीं कि हम सत्य के मार्ग पर चल रहे है हमारी विजय निश्चित होगी।

उस समय एक हिंदू नारी को अध्यापक बनना धर्मद्रोही और समाजद्रोही कार्य माना गया। हजारों वर्षों से भाग्य में लिखा हुआ चुल्हा-चौका छोड़कर कोई नारी अध्यापिका बने, यह प्रगतिशिलता तत्कालीन दकियानूसी समाज को कैसे स्वीकार होती? जब वे पाठशाला जाती तब प्रतिक्रियावादी उन पर ताने कसते, कीचड़ और गोबर फेंकते यहाँ तक कि पत्थर भी बरसाते लेकिन, वे अपने पथ पर अचल रहीं। वे कहती - मैं यह काम अपनी बहनों के लिए ईश्वर का काम समझकर करती हूँ, मुझ पर बरसाये जाने वाले पत्थर और गोबर की मार मेरे लिए फूलों के समान है।

अध्यापन का कार्य करते समय सावित्रीबाई को थॉमस क्लार्कसन की जीवनी पढ़ने को मिली। श्री क्लार्कसन हबशियों को गुलामी से मुक्त करने वाले एक बड़े नेता थे। उनकी जीवनी पढ़ने पर सावित्रीबाई की पक्की धारणा बन गई कि शूद्रातिशूद्रों को गुलामी की प्रतीति कराना और उससे मुक्त करने के लिए उन्हें शिक्षा देना अत्यंत आवश्यक है।

जोतीराव के मार्गदर्शन में सावित्रीबाई ने 'महिला सेवा मंडल' का गठन कर महिला-सुधार की पहल की। यह भारत की पहली महिला सेवा संस्था है। सावित्रीबाई फुले के विचारों की प्रखरता का उनके भाषणों से भी परिचय होता है। एक भाषण में उन्होंने कहा है - सर्व मानव एक ही ईश्वर की संतान हैं, यह बात जब तक हमें समझ में नहीं आती, तब तक ईश्वर का सत्य रूप हम जान नहीं सकते। ऊँची जाति और नीच जाति परमेश्वरकृत नहीं नहीं है। स्वार्थी मनुष्यों ने अपनी श्रेष्ठता को अबाधित रखने के लिए और उसके द्वारा अपने-अपने, वंशजों के हितों की रक्षा करने के लिए निर्माण किया हुआ, यह पाखंण्डी तत्त्वज्ञान है।

दुसरे मनुष्य को अछूत मानना, मानवता क लक्षण नहीं है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को उसका तिरस्कार करना चाहिए। इसी में प्रत्येक मनुष्य का, समाज का तथा मानव संस्कृति का कल्याण है। उनकी काव्य-रचना तथा भाषणों से, सावित्रीबाई भी जोतीराव के सामन ही क्रांतिकारी विचारों से प्रेरित थीं, यह प्रमाणित होता है।

1897 ई. में महाराष्ट्र में प्लेग फैला जिससे एक बालक की दशा बहुत खराब थी। सब लोग दूर से ही देख रहे थे। सावित्रीबाई ने उसे गले लगाया और कंधे पर उठाकर अपने पुत्र यशवंतराव के अस्पताल में ले गयी। इस बालक से उन्हें भी हैजा हो गया और यह महान क्रांतिकारी सावित्रीबाई फुले का 1897 ई. में निधन हो गया।

निष्कर्ष

स्त्री शिक्षा की प्रणेता सावित्रीबाई भारत की प्रथम अध्यापिका, समाजसेवी, क्रांतिकारी महिला तो हैं ही, साथ ही भारत में स्त्री-मुक्ति आन्दोलन की प्रणेता भी हैं। उन्होंने जिस स्त्री-मुक्ति आन्दोलन का सूत्रपात किया था, उसकी बदौलत ही आज अनेक महिलाएँ उच्च पदों पर पहुँच सकी है। उनकी स्पष्टवादिता शूद्र-अतिशूद्र समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की उनकी दूरदृष्टि, सद्वर्तन, विद्या-प्रेम, विलक्षण जिद्द तथा उसके साथ दृढ निष्ठा आदि गुणों के कारण उनकी महानता द्विगुणीत होती है। नारी उत्थान हेतु उनके द्वारा किए गए प्रयास अभूतपूर्व व अद्वितीय हैं। 19 वीं शती के मध्य में एक महान सामाजिक आन्दोलन का सूत्रपात उन्होंने किया।

स्त्री शिक्षा की प्रणेता सावित्रीबाई भारत की प्रथम अध्यापिका, समाजसेवी, क्रांतिकारी महिला तो हैं ही, साथ ही भारत में स्त्री-मुक्ति आन्दोलन की प्रणेता भी हैं। उन्होंने जिस स्त्री-मुक्ति आन्दोलन का सूत्रपात किया था, उसकी बदौलत ही आज अनेक महिलाएँ उच्च पदों पर पहुँच सकी है। उनकी स्पष्टवादिता शूद्र-अतिशूद्र समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की उनकी दूरदृष्टि, सद्वर्तन, विद्या-प्रेम, विलक्षण जिद्द तथा उसके साथ दृढ निष्ठा आदि गुणों के कारण उनकी महानता द्विगुणीत होती है। नारी उत्थान हेतु उनके द्वारा किए गए प्रयास अभूतपूर्व व अद्वितीय हैं। 19 वीं शती के मध्य में एक महान सामाजिक आन्दोलन का सूत्रपात उन्होंने किया।

लोकमान्य तिलक देश में राजकीय क्रांति के जनक माने जाते हैं। उन्होंने देशवासियों को स्वतंत्रता का महामंत्र दिया। उन्होंने कहा कि 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है उसे हम लेकर ही रहेंगे।' उसी प्रकार महाराष्ट्र में महात्मा फुले एवं सावित्रीबाई फुले सामाजिक क्रांति के अग्रदूत रहे हैं। गांधीजी उन्हें सच्चा महात्मा कहते थे। बाबासाहब आंबेडकर उनके सामाजिक दर्शन से केवल प्रभावित ही नहीं थे बल्कि उन्हें भगवान बुद्ध एवं कबीर इन दो गुरुओं के साथ अपना तीसरा गुरु मानते थे। राष्ट्र के प्रति महत्त्वपूर्ण महापुरुषों के साथ ही विश्व के महानतम लोगों की श्रेणी में भी उनका नाम स्वतः आ जाता है, जिस पर उनका अधिकार है। महात्मा बुद्ध, कबीर, मार्टिन लूथर किंग, कार्ल मार्क्स जैसे महान लोगों की पंक्ति में फुले दंपती का स्थान नियत किया जाना चाहिए। वह भारत की स्त्री शिक्षा के प्रणेता है।

होती क्या है स्वतंत्रता, न जाने,
बहुपीडिता हम स्त्रियाँ।
दूंगा ये अधिकार नारियों को
लो ये शपथ तुम यहाँ।
लेकर के आधार सत्य का
हम जनहित करें सर्वदा।
करती हैं तव वरण कर -
ग्रहण कर, साक्षी रहे सब सदा।। ❑

स्वतंत्रता संग्राम की कुछ विस्मृत वीरांगनाएँ

डॉ. सुषमा मिश्र
असोसिएट प्रोफेसर
बीएड विभाग
श्री जय नारायण मिश्र
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
लखनऊ (उ.प्र.)

भारतीय सनातन संस्कृति में आदि काल से ही महिलाओं को अत्यंत सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। नारी को शक्ति का प्रतीक मानते हुए सदैव अनेक रूपों में उसकी पूजा की गई है। उच्चारण में भी सदैव नारी के नाम को प्रथम स्थान दिया गया है, यथा सीता राम, शिव पार्वती, राधा कृष्ण आदि। रामायण महाभारत काल में भी नारी उत्पीड़न, नारी भर्त्सना को अपराध की श्रेणी में रखकर अपराधी को कालांतर में उचित रूप से दंडित किया गया है। सनातन काल से ही नारी भी अपनी अस्मिता को स्थापित करते हुए समाज में मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती आ रही है। अनेक उदाहरण माता सीता, गार्गी, मंदोदरी, सत्यवती, कुंती, द्रौपदी, जीजा बाई, महाश्वेता देवी, किटूर चेनम्मा, भीखाजी कामा, रानी अवंतीबाई, सावित्रीबाई फुले, ताराबाई और कल्पना चावला आदि के रूप में समाज के समक्ष विद्यमान हैं। परंतु कालांतर में मुगल आक्रांताओं के आगमन के फलस्वरूप नारी की दशा चिंतनीय होती चली गयी एवं नारी समाज की मुख्यधारा से कट कर पर्दे की ओट में रहने पर विवश हुई। उसी समय से नारी पराधीनता के काले इतिहास का भारत में प्रादुर्भाव हुआ जिसके अनेक कारण थे। विभिन्न रूपों में महिला उत्पीड़न समाज में दृष्टिगोचर होने लगा। नारी का स्थान समाज में निम्न से निम्नतर होता चला गया। नारी के स्वतंत्र आवागमन, नारी शिक्षा, नारी स्वतंत्रता पर ऐसा कुठाराघात हुआ कि महिलाओं के लिए समाज की मुख्यधारा में जुड़कर कार्य करना केवल कुछ अपवाद स्वरूप स्त्रियों को ही सुलभ हो पाया। मुगलों के पश्चात भारत में पुर्तगीज़ फ्रांसीसी डच डेन मिशनरियों ने अपना प्रभुत्व ज़माना चाहा परंतु अंततः गद्दार भारतीयों की मदद एवं तत्काल राजनीतिक कारणों से भारत ब्रिटिश शासन के अधीन हुआ।

समय परिवर्तन के साथ-साथ भारतीयों के अंतर्मन में अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने की दृढ़ इच्छाशक्ति जाग्रत हुई। मुगल आक्रांताओं के पतन के साथ ही भारतीय महिलाओं ने भी अनेक समाज सुधारकों एवं स्वयं के अंतर्मन की प्रेरणा के द्वारा, समाज के प्रत्येक क्षेत्र से जुड़कर अपना योगदान देना प्रारंभ किया। वस्तुतः जो भारत भूमि मुगलों से स्वतंत्र थीं, वहीं

पर महिलाओं का पराक्रम अनेक क्षेत्रों में देखा गया। स्वाधीनता के इस महायज्ञ में महिलाओं ने प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान दिया। भीमा बाई होल्कर जो इंदौर की महारानी अहिल्याबाई की पौत्री एवं महाराज यशवंतराव होलकर की पुत्री थी उन्हें प्रथम महिला स्वतंत्रता संग्राम सेनानी होने का गौरव प्राप्त हुआ। इन्होंने 22 वर्ष की उम्र में सन् 1817 में ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना को गुरिल्ला युद्ध में कड़ी टक्कर दी। महिदपुर के युद्ध में इन्होंने हाथ में तलवार एवं बरछा लेकर 2500 घुड़सवारों के दल का नेतृत्व किया। सर्वप्रथम अंग्रेजों के विरुद्ध तलवार उठाने का साहस भी इन्होंने ही किया। इतिहासकार मानते हैं कि इनकी वीरता से प्रभावित होकर रानी लक्ष्मीबाई ने भी अंग्रेजों से लोहा लेने की प्रेरणा प्राप्त की थी।

सर्व प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का बिगुल सन् 1857 में मंगल पांडेय के द्वारा मेरठ से बजाया गया। इस स्वतंत्रता संग्राम में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने अपना भरपूर सहयोग दिया और अंत तक अंग्रेजों से लोहा लेते लेते इस वीरांगना ने 17 जून 1858 को वीरगति प्राप्त की। रानी साहिबा ने महिलाओं को स्वयं प्रशिक्षण देकर महिलाओं की एक पूरी सेना अंग्रेजों से लोहा लेने के लिए तैयार की थी। उनकी इस महिला सेना में से अधिकांश वीरांगनाएँ इस स्वतंत्रता संग्राम की बलिवेदी पर चढ़ गई। जिनके नाम भी आज इतिहास में कहीं नहीं पाए जाते। 1957 के संग्राम की शुरुआत में ही अंग्रेजों ने लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह को देश निकाला दिया था। तब उनकी अनुपस्थिति में उनकी बेगम हजरत महल ने अंग्रेजों के विरुद्ध मोर्चा सम्भाला। उन्हीं की सेना की एक दलित वीरांगना ऊदा देवी पासी लड़ाई के दौरान पीपल के पेड़ पर चढ़ गयी एवं वहीं से निशाना बनाकर करीब 36 अंग्रेजों को उन्होंने अकेले ही मार गिराया। अंततः अंग्रेज सैनिकों का ध्यान पेड़ पर गया और उन्होंने इस वीरांगना का शरीर गोलियों से छलनी कर दिया। उनकी मृत्यु के उपरान्त अंग्रेज़ों को पता चला कि ये सैनिक कोई पुरुष नहीं वरन महिला है। उनका बलिदान आगे आने वाले समय में देश की महिलाओं के लिए प्रेरणा स्रोत बना।

भारत का स्वतंत्रता संग्राम अनेक महिलाओं के त्याग, तपस्या, बलिदान, साहस, शौर्य से ओतप्रोत है। आज देशवासी उन कुछ महिला स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के बारे में जानते हैं, जो सुशिक्षित थी, उच्च कुल से संबंध रखती थी एवं नेतृत्व क्षमता से भी युक्त थी। सतत संघर्ष करने तथा नेतृत्व के कारण उनका नाम इतिहास में अमर हो गया है। इन महान विभूतियों में बेगम हजरत महल। श्रीमती सरोजिनी नायडू, एनी बिसेंट, अरुणा आसफ अली, कस्तूरबा गाँधी, विजयलक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी, राजकुमारी अमृत कौर, मीरा बेन, जानकी देवी बजाज, सावित्रीबाई फुले, कैप्टन लक्ष्मी सहगल, दुर्गाबाई देशमुख, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, चेनम्मा, सरला देवी चौधरानी ((रवीन्द्रनाथ टैगोर की भतीजी) आदि सैकड़ों महिलाओं के नाम शामिल है, जो किसी ना किसी रूप में जनमानस के सामने आते रहते हैं। लेकिन हजारों अज्ञात वीरांगनाएँ जो संघर्ष करते करते, वीरगति को प्राप्त हो गयी, उन्हें कोई नहीं जानता क्योंकि उनका नाम ऐतिहासिक अभिलेखों में नहीं है। उनके जाते ही लोग उन्हें भूल गए। लेकिन भारत की स्वतंत्रता में उनका योगदान उतना ही है जितना विख्यात वीरांगनाओं का। ये वीरांगनाएँ देश के प्रत्येक भूभाग एवं प्रत्येक आयु वर्ग से संबंधित थी। उन समस्त वीरांगनाओं को नमन करते हुए उनमें से कुछ का उल्लेख मैं यहाँ करना चाहूँगी।

स्वाधीनता की इस महायज्ञ में महिलाओं ने प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान दिया। भीमा बाई होल्कर जो इंदौर की महारानी अहिल्याबाई की पौत्री एवं महाराज यशवंतराव होलकर की पुत्री थी उन्हें प्रथम महिला स्वतंत्रता संग्राम सेनानी होने का गौरव प्राप्त हुआ। इन्होंने 22 वर्ष की उम्र में सन् 1817 में ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना को गुरिल्ला युद्ध में कड़ी टक्कर दी। महिदपुर के युद्ध में इन्होंने हाथ में तलवार एवं बरछा लेकर 2500 घुड़सवारों के दल का नेतृत्व किया। सर्वप्रथम अंग्रेजों के विरुद्ध तलवार उठाने का साहस भी इन्होंने ही किया। इतिहासकार मानते हैं कि इनकी वीरता से प्रभावित होकर रानी लक्ष्मीबाई ने भी अंग्रेजों से लोहा लेने की प्रेरणा प्राप्त की थी।

ऊषा मेहता – ऊषा मेहता जी कांग्रेस के प्रशासक प्रसारण विभाग की प्रमुख थीं। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान सूचना प्रसारण एवं रेडियो ब्रॉडकास्ट का कार्य संचालन करती थी। आंदोलन, विरोध, प्रदर्शन,जेल यात्रा की सूचना, युवा पीढ़ी को सूचना देना, एवं गांधीजी के द्वारा करो या मरो के नारे आदि को प्रचारित करने का भी कार्य करती थी। ऊषा मेहता जी के कारण देश के किसी भी भू–भाग में होने वाले आंदोलन की जानकारी यथासंभव पूरे देश में प्रचारित प्रसारित कराई जाती थी।

झलकारी बाई – ये झांसी के निकट भोजला गाँव के सदोबार सिंह एवं जमुना देवी की पुत्री थी। इनकी माँ की मृत्यु के बाद इनका लालन पालन एक पुत्र की भांति किया गया। ये भेड़ें चराती थी – अपनी युवावस्था में इन्होंने अपनी लाठी से एक तेंदुए को मार गिराया था। डाकुओं का भी बड़े आत्मविश्वास से इन्होंने सामना किया था। इनका विवाह रानी झांसी की सेना में एक सैनिक पूरन सिंह से हुआ था। इनके विषय में जानकर रानी

लक्ष्मीबाई ने इन्हें युद्ध कला एवं घुड़सवारी की शिक्षा दी और अपनी महिला सेना में नियुक्त किया। कालांतर में यह महिला सेना की सेनानायक भी बनी। स्वतंत्रता संग्राम में यह महारानी लक्ष्मीबाई का दाहिना हाथ थी। 1857 के विद्रोह में झांसी की रानी 4000 सैनिकों के साथ अंग्रेजों से युद्ध कर रही थी। तत्याटोपे रानी की सहायता के लिए आने वाले थे परन्तु उनको रास्ते में जनरल ह्यूज़ से मुकाबला करना पड़ा और वह नहीं पहुँच पाए। रानी की सेना के एक गद्दार ने किले का द्वार खोल दिया। तब सर्वसम्मति से रानी को आगामी युद्ध हेतु किले से पलायन करना पड़ा। उसी समय झलकारी बाई ने रानी की वेशभूषा में दुश्मन की ओर प्रस्थान किया। उनकी शक्ल भी रानी से समानता रखती थी। रानी सुरक्षित किले से निकल गयी और झलकारी बाई को गिरफ्तार करके फाँसी पर चढ़ा दिया गया। पूरा भारत उनकी इस वीरता एवं बलिदान के कारण उन्हें नमन करता है।

रानी गाइदिन्ल्यू – इनका जन्म मणिपुर के एक गाँव के नागा परिवार में 26 जनवरी 1915 उसको हुआ था इनकी स्कूली शिक्षा, नहीं हो पाई– मात्र 13 वर्ष की आयु में यह हरेका आंदोलन में

शामिल हो गई, जिसका लक्ष्य प्राचीन नागा मान्यताओं की बहाली एवं पुनर्जीवन था। कालांतर में यह आंदोलन ब्रिटिश विरोधी हो गया। नागा क्षेत्रों में ब्रिटिश राज़ की समाप्ति इसका लक्ष्य बन गया। 16 वर्ष की आयु में ही रानी गाइदिन्ल्यू ब्रिटिश सरकार के छापामार विरोधी दल की नेता बन गई। वह इस आंदोलन की राजनीतिक उत्तराधिकारी भी बनी एवं अपने समर्थकों को खुलकर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध आंदोलन करने को कहा। रानी ने असम, नागालैंड, मणिपुर में ब्रिटिशर्स के विरुद्ध संघर्ष किया। दिनांक 17 अक्टूबर 1932 को इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। अनेक जेलों में रहने के पश्चात सन् 1946 में अंतरिम सरकार के गठन के बाद इन्हें रिहा किया गया। 1972 में इन्हें ताम्रपत्र स्वतंत्रता सेनानी पुरस्कार, 1982 में पद्मभूषण एवं इनके सामाजिक कार्यों को देखते हुए 1983 में विवेकानंद पुरस्कार दिया गया। इन्हें नागालैंड की लक्ष्मीबाई भी कहा जाता था।

मातंगिनी हाजरा – मातंगिनी हाजरा भारत छोड़ो आंदोलन और असहयोग आन्दोलन की सक्रिय सदस्य थीं। जिसकी आयु में लोग जीवन से ऊब जाते हैंऔर किसी प्रकार अपने जीवन के बचे खुचे दिन व्यतीत करते हैं। उस आयु में उन्होंने स्वाधीनता संग्राम में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। 71 वर्ष की आयु में भी देशप्रेम की भावना इनमें अत्यंत प्रबल थी। भारत छोड़ो आंदोलन के जुलूस के दौरान जब वह आजादी के प्रतीक भारतीय झंडे को हाथ में लेकर चल रही थी तब तीन बार गोली लगने के पश्चात भी आगे ही बढ़ती गई। अंग्रेजों द्वारा बलपूर्वक झंडा छीनने का प्रयास किया गया। इसके बाद इन्होंने ध्वज तब तक नहीं छोड़ा जब तक इन्होंने अपने प्राण नहीं त्याग दिए। इन्होंने वंदे मातरम् कहते हुए वीरगति प्राप्त की और आज़ादी के महायज्ञ में अपनी आहुति दी।

भागेश्वरी फूकनानी – भागेश्वरी फुकनानी असम की प्रखर स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में से एक थीं। उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भारतीय झंडे का अपमान करने वाले एक अंग्रेज अधिकारी की डंडे से पिटाई कर दी थी। प्रौढ़ावस्था में भी उनके शौर्य को देखकर असम की जनता के हृदय में देशप्रेम की भावना भरने लगी थी। अंग्रेजों को डर था कि अगर यह आंदोलन लंबे समय तक चला तो असम में कई खतरनाक क्रांतिकारी पैदा हो सकते हैं। इसी डर से छोटा सा कारण मिलते ही उन अत्याचारियों ने स्त्री की अस्मिता का ध्यान रखते हुए भी इतना बर्बरता पूर्ण कार्य किया कि इस साहसी वीरांगना की निर्ममता से गोली मारकर हत्या कर दी।

राजकुमारी गुप्ता – अत्यंत कम व्यक्तियों को मालूम है कि काकोरी की ट्रेन डकैती में पुरुष क्रांतिकारियों के साथ साथ एक वीर भारतीय नारी भी सम्मिलित थीं, जिनका नाम था राजकुमारी गुप्ता। यह एक मध्यमवर्गीय वैश्य परिवार की महिला थीं और अपने पति के साथ मिलकर इन्होंने महात्मा गाँधी और चंद्रशेखर आजाद जैसे नायकों के साथ कार्य किया। काकोरी ट्रेन डकैती में इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। क्योंकि हथियारों को क्रांतिकारियों तक लाने ले जाने का उत्तरदायित्व इनके ऊपर ही था। वह अपने अंतर्वस्त्रों में हथियारों को छिपाकर ले जाती थी और किसी को शक न हो इसलिए अपने साथ अपने तीन वर्ष के मासूम बच्चे को भी रखती थी। परंतु जहाँ यह वीर स्त्री भारत की आजादी के लिए इतना त्याग कर रही थी, वहीं इनके परिवार ने शर्मनाक कृत्य करते हुए उन्हें उस समय घर से निकाल दिया जब पुलिस ने इन्हें इस घटना में गिरफ्तार किया था। भारत के क्रांतिकारियों को इन्होंने अपना अमूल्य सहयोग हमेशा प्रदान किया।

बीना दास – इनका जन्म बंगाल प्रांत में हुआ था।उनके पिता ब्रह्म समाज से जुड़े एक प्रखर समाज सुधारक थे। बीना दास कलकत्ता की स्त्रियों के अर्द्ध क्रांतिकारी

संगठन क्षत्रिय संघ की सदस्य थी। 6 फरवरी 1932 को उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय में बंगाल की गवर्नर स्टैनली जैक्सन को मारने का प्रयास किया था। उन्होंने पाँच गोलियाँ चलाईं पर वे निशाना चूक गईं। उन्हें 9 साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। 1939 में जेल से छूटने के बाद वो कांग्रेस में शामिल हो गई और भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लिया और फिर से जेल गई। वे पश्चिमी बंगाल विधानसभा की सदस्य भी रहीं। अपने पति की मौत के बाद वीरांगना अकेली रह गयी एवं ऋषिकेश में रहती थी। वही गुमनामी में रहते हुए इस लोक को छोड़कर ये सदा के लिए चली गई।

कल्पना दत्त – कल्पना दत्त भी बंगाल की एक प्रसिद्ध महिला क्रांतिकारी थीं। इनका जन्म चिटगांव जिले में हुआ था। कल्पना दत्त प्रसिद्ध क्रांतिकारी सूर्यसेन की उस सशस्त्र स्वतंत्रता आंदोलन की सदस्य थीं, जिन्होंने सन् 1930 में चिटगांव शस्त्र शाला में लूट की घटना को अंजाम दिया था। ये भी उसी क्षत्रिय संघ की सदस्य थीं, जिसमें बीना दास और प्रीतिलता वाडेकर जैसी स्वतंत्रता सेनानी शामिल थी। अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष छेड़ने के कारण इन्हें कई बार जेल जाना पड़ा।

कनकलता बरुआ – सन् 1924 में जन्मीं कनकलता बरुआ को वीरबाला के नाम से भी जाना जाता है। ये असम की एक स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थी। इन्होंने 1942 में केवल 17 वर्ष की उम्र में भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लिया। भारत छोड़ो आंदोलन में ये भारत का ध्वज लेकर आंदोलन के आगे आगे चल रही थी एवं जुलूस का नेतृत्व कर रही थी। अंग्रेजों ने इन्हें गोली मार दी और जब तक इनके प्राण नहीं गए, इन्होंने राष्ट्रीय ध्वज को नहीं छोड़ा। केवल 17 वर्ष की आयु में इन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों की बलि दे दी। शायद ऐसी ही वीर बालाओं के शौर्य के कारण ही अंग्रेजों को भारत छोड़कर जाना पड़ा।

पार्वती गिरी – पार्वती गिरीओडिशा की प्रमुख महिला वीरांगनाओं में गिनी जाती है। धनंजय गिरी की पुत्री के रूप में 19 जनवरी 1926 को इनका जन्म हुआ था। वरीष्ठ कांग्रेस नेताओं के संपर्क में आने पर 12 वर्ष की उम्र में ही इन्होंने कक्षा तीन के बाद स्कूल छोड़ दिया और गाँव–गाँव आजादी की अलख जगाने के लिए अपनी यात्रा प्रारंभ की। इस क्रम में ये बरगाह संभलपुर, पदमपुर, पानीमारा आदि स्थानों पर गयी, जहाँ उन्होंने ग्रामीणों और बच्चों को स्वदेशी अपनाने की शिक्षा दी। ये बारी आश्रम में भी रही, जहाँ इन्होंने हस्तशिल्प, अहिंसा और आत्मनिर्भरता सीखी। अपनी इन गतिविधियों के कारण ये कई बार जेल गईं परंतु प्रत्येक बार अवयस्क होने के कारण पुलिस को इन्हें छोड़ना पड़ा। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में उन्होंने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया और जब इन्होंने अंग्रेज अधिकारी के दफ्तर में हल्ला बोला, तब इन्हें दो वर्ष के लिए संभलपुर जेल में भेजा गया। मात्र 16 वर्ष की अवस्था में इन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए दो वर्ष जेल में व्यतीत किए। संबलपुर में बरगाह के कोर्ट में वकीलों के अंग्रेजों की पैरवी करने के विरोध में

इन्होंने आंदोलन किया। स्वतंत्रता के पश्चात प्रयाग महिला विद्यालय इलाहाबाद से इन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा पूर्ण की। 1998 में उड़ीसा के राज्यपाल द्वारा इनको डॉक्टरेट की उपाधि भी दी गई। संबलपुर जिले के नरसिंहगढ़ में इन्होंने कस्तूरबा गाँधी मात् निकेतन आश्रम की स्थापना की जिसमें महिलाओं और अनाथ बच्चों के लिए इन्होंने कार्य किया। जेल की दशा सुधारने एवं कुष्ठ रोगियों के लिए भी इन्होंने अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य किए। इसी कारण इन्हें उड़ीसा की मदर टेरेसा या बड़ी माँ के रूप में भी जाना जाता है। इनके नाम पर 1916 में भारत सरकार द्वारा विशाल सिंचाई परियोजना को भी प्रारंभ किया गया है। भारत सरकार के समाज कल्याण विभाग के द्वारा भी इन को पुरस्कृत किया जा चुका है।

तारा रानी श्रीवास्तव – तारा रानी श्रीवास्तव बिहार में पटना के पास सारण गाँव में जन्मी थी। इन्होंने अपने पति के साथ मिलकर आजादी की मशाल को प्रज्वलित किया। बिहार के सीवान जिले में पुलिस थाने के सामने लोगों की भारी भीड़ पुलिस थाने पर झंडारोहण के लिए आई। उस भीड़ में से एक नवविवाहित युगल सामने आया जो तारा रानी और उनके पति थे। इन्होंने पुलिस थाने पर

झंडारोहण का प्रयास किया परंतु पुलिस की गोली इनके पति को लगी। इन्होंने अपने पति के घाव पर पट्टी बांधी और झंडे को लेकर आगे बढ़ती चली गई। वापस लौटने पर इन्होंने देखा इनके पति की मृत्यु हो चुकी थी। परंतु इन्होंने बिना विचलित हुए आजादी की लड़ाई में अपना योगदान जारी रखा। आतताइयों के सामने झुकने से इनकार करते हुए तारा रानी भारतीय झंडे को मजबूती से थामे हुए संघर्ष करती रहीं। नारियों को संगठित करके आजादी के युद्ध में कूदने के लिए ये सदैव उनको प्रेरणा देती रही।

दुर्गा भाभी – दुर्गा भाभी के नाम से प्रसिद्ध दुर्गावती देवी भारत के स्वतंत्रता संग्राम की एक प्रमुख वीरांगना थी। वे क्रांतिकारी भगवती चरण बोहरा की धर्मपत्नी थी। दुर्गा भाभी क्रांतिकारियों की प्रमुख सहयोगी थी और 18 दिसंबर 1928 को भगत सिंह ने इन्हीं दुर्गा भाभी के साथ वेश बदलकर कलकत्ता मेल से यात्रा की थी। आजादी की लड़ाई में दुर्गा भाभी का एक विशेष स्थान है। इस वीर स्त्री ने उच्च कुल और अमीर परिवार में जन्म लेने के बावजूद देश की आजादी के लिए असीमित कष्ट सहे। युवावस्था में पति की मृत्यु का असहनीय दुख, उस पर पुलिस की बर्बर प्रताड़ना, घरवालों का त्याग और साथ ही एक अबोध शिशु के पालन पोषण की भारी जिम्मेदारी, यह सब दुर्गा भाभी को अकेले ही सहना पड़ा। परंतु इन भीषण विपत्तियों के बावजूद भी दुर्गा भाभी ने कभी हार नहीं मानी–भारत की यह वीरांगना इतनी साहसी थी कि इन्होंने गवर्नर हेली को गोली मारने का प्रयास किया। अंततः जब इन्होंने मुंबई के पुलिस कमिश्नर को भी गोली मारी तब अंग्रेज इनके पीछे ही पड़ गए। क्रांतिकारियों को हथियार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से दुर्गा भाभी बम बनाने की एक फैक्टरी भी चलाती थी। 28 मई 1930 को रावी नदी के तट पर साथियों के साथ बम बनाने के बाद परीक्षण करते समय इनके पति शहीद हो गए थे। इसके बाद भी उन्होंने हौसला नहीं खोया और हमेशा उनके शहीद होने के बाद भी क्रांतिकारियों के साथ सक्रिय रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अत्यंत सामान्य जीवन जीते हुए 14 अक्टूबर 1999 को भारत की इस महान वीरांगना ने गाजियाबाद में अपने जीवन की अंतिम साँस ली।

जनसामान्य में भी असंख्य महिलाओं ने अपने अपने भाई, पुत्र, पति, पिता आदि को सहयोग देने के लिए कष्ट सहन किए व प्रताड़ना झेली। क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल को 18 दिसंबर 1927 को फांसी दी जानी थी। उनकी माँ 1 दिन पूर्व उनसे मिलने जेल गई। बिस्मिल की पलकें भीगी थी। उनकी माँ ने उनसे कायर बनकर आँसू न बहाने को कहा। जवाब में बिस्मिल ने कहा, मैं रो रहा हूँ क्योंकि शायद अगले जन्म में मुझे आपके जैसी माँ नहीं मिल सकेगी। क्योंकि वो अपने माँ के त्याग की भावना से परिचित थे। उनकी माँ ने उसके बाद के संभाषण में अपने दूसरे पुत्र का हाथ उठाकर कहा कि वे राष्ट्र के नाम पर अपना दूसरा पुत्र भी न्योछावर करने को तैयार हैं। यह है भारतीय नारियों के त्याग की पराकाष्ठा–अकल्पनीय। उत्तर प्रदेश की बिना औपचारिक शिक्षा प्राप्त एक बालिका थी, गंगादेवी जिनका 13 वर्ष की उम्र में विवाह हो गया था और पति राजकीय सेवा में थे। राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत वे पति से छुपाकर फरार क्रांतिकारियों के लिए भोजन बनाकर भेजती थी। अपने बच्चों को भी ऐसी महिलाएँ राष्ट्र प्रेम प्रारंभ से ही सिखाती थीं। अर्थात् देशप्रेम की भावना से ओतप्रोत अनेक महिलाएँ अपने स्तर पर अपने–अपने सामर्थ्य भर राष्ट्रीय के कार्यों में संलग्न थीं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में अनेक महिलाओं ने अनेक जोखिम मोल लेकर क्रांतिकारियों की प्रत्येक गतिविधि में सहयोग देकर अपना अमूल्य योगदान दिया। गांधीजी के अनेक आंदोलनों में महिलाओं ने भारी भीड़ के रूप में प्रतिभागिता की। सत्याग्रह आंदोलन, भारत छोड़ो आंदोलन, विदेशी कपड़ों की होली जलाने का कार्य, दांडी यात्रा, सूचनाओं का आदान प्रदान, अन्य महिलाओं के जागरण का कार्य, पुरुष सदस्यों को स्वाधीनता हेतु पूर्ण सहयोग देने के ऐसे अनेक कार्य किए जिनके बिना स्वतंत्रता आंदोलन की सफलता असंभव थी। नेताजी सुभाष चंद्र बोस के आह्वान पर आजाद हिंद फौज में पूरी महिला ब्रिगेड का गठन किया गया, जिसका उत्तरदायित्व कैप्टन लक्ष्मी सहगल को सौंपा गया। इसी श्रृंखला में भारत के स्वाधीनता आंदोलन में श्रीमती एमिली शंकल के योगदान को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता, जो उन्होंने आदरणीय सुभाष चंद्र बोस का विदेश की धरती पर सहयोग करके भारत को आंशिक रूप में प्रदान किया। स्वतंत्रता की कल्पना बिना महिला सहयोग के एक दिवास्वप्न ही होगी। आज हम भारत की उन समस्त माताओं ललनाओं, बहनों अमर शहीदों की माताओं, बहनों, पत्नियों को नमन करते हैं, वंदन करते हैं, जिन्होंने भारत के इस स्वाधीनता यज्ञ में गुमनाम रहते हुए भी किसी भी प्रकार अपनी आहुति अर्पण की है। ❑

स्वातंत्र्य यज्ञ की मौन समिधा - यशोदा गणेश सावरकर

डॉ. कल्पना पाण्डे

विभागाध्यक्ष गणित,
विएमवी कॉलेज,
नागपुर (महाराष्ट्र)

'यदि हम सात भाई होते, उन सभी को भारत माता के चरणों में अर्पण कर दिया होता' इस दुर्दम्य महत्त्वाकांक्षा से भारतमाता के चरणों पर जीवन अर्पण करने वाले तीन सावरकर बंधुओं की अमर नाममुद्रा समय पटल पर रुधिराक्षरों से अंकित हुई है। सावरकर बंधुओं के त्याग का इतिहास संपूर्ण विश्व को ज्ञात है। परन्तु इस ज्ञात इतिहास के पीछे का अज्ञात इतिहास, अज्ञात बलिदान, अज्ञात समिधा आज भी अज्ञात ही हैं। उम्र के सोलहवें वर्ष में भीष्म प्रतिज्ञा लेकर यज्ञकुंड में आत्मार्पण करने हेतु संकल्पित विनायक दामोदर सावरकर के भारतमाता की स्वतन्त्रता के स्वप्न को साकार करने हेतु तीन चंदनी समिधा मौन जल रहीं थीं। यशोदा गणेश सावरकर, यमुना विनायक सावरकर तथा लक्ष्मी नारायण सावरकर। सावरकर घराने की ये तीन धीरोदात्त स्त्रियाँ! तीनों सावरकर बंधुओं के जीवन में भाग्य का, लक्ष्मी का वास था वह मुख्यत: उनके गृहलक्ष्मी के रूप में ही था। परन्तु इस भाग्ययोग को श्राप था विरह का वियोग का! कष्टपूर्ण जीवन अनेकों के हिस्से में आता है; परन्तु इन स्त्रियों की विशेषता है, वह अनेक जीवन की पद्धति में! आनंदमय तथा रसभरा मन, उदात्त विचार तथा दु:ख का हलाहल पीकर भी उनकी अटल ध्येयनिष्ठा! ये उनके विशेष गुण उन्हें सर्वोच्च पद पर आसीन करते हैं। जीवन में उनके सद्गुणों की, धैर्य की कसौटी लेने वाले अनेक प्रसंग आए। इस अग्निपरीक्षा में उनके व्यक्तित्व का सोना और अधिक झिलमिला उठा। इन तीनों ने न केवल पतिविरह, भूखप्यास, अपमान उपेक्षा सहन की, इसके बावजूद पति के राष्ट्रकार्य का काम भी संभाला।

सावरकर बंधुओं का त्याग, पराक्रम, कष्ट इतिहास में लिखा गया है; परन्तु यह त्याग, यह पराक्रम करते समय उन स्त्रियों का जीवन कैसा रहा? सोलहवें वर्ष में माँ तुलजाभवानी के चरणों पर ली गई प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए स्वातंत्र्यवीर विनायक सावरकर तो 'दो आजीवन कारावास' भोगने के लिए अंदमान चले गये; परन्तु उनके बाद यमुना कैसे रही! गणेश सावरकर तो पहले ही अंदमान पहुँच चुके थे उनके पश्चात् यशोदा कैसी थीं? इस भयंकर काल में वैद्यकीय शिक्षा पूर्ण कर राष्ट्रकार्य साधने वाले नारायण की पंद्रहवर्षीय पत्नी किस धीरज के साथ रही? इन सबका उत्तर है यशोदा भाभी, 'येसूवहिनी'! येसूवहिनी ने देश के लिए किया हुआ त्याग, देश की स्वतंत्रता के लिए किए गए प्रयत्नों की पराकाष्ठा, अपार धैर्य से कुटुम्ब पर आने वाले प्रत्येक संकट पर की गई मात!

यशोदा, त्र्यंबकेश्वर के श्री नानाराव फडके की भतीजी थीं। माता-पिता का बचपन में ही स्वर्गवास हो गया था। श्री गणेश सावरकर के साथ उनका विवाह 1896 में हुआ। येसूभाभी स्वभाव से ममतामयी, परोपकारी थीं। विनयक की माता राधाबाई की मृत्यु के उपरांत घर का जो आनंदमय वातावरण नष्ट हो गया था वह येसूभाभी के आगमन से पुन: जीवित हो उठा। येसूभाभी की समरणशक्ति बहुत तीक्ष्ण थी। उस समय के रिवाज के मुताबिक उन्हें 50-60 गीत याद थे जिसे वे मधुर स्वर में गाती थीं। विनायक ने आग्रह करके भाभी को पढ़ना लिखना

सिखाया। विनायक को कविता लिखने का शोक था। उन्होंने भाभी को भी कविता करना सिखाया। येसूभाभी आर्थिक विपन्नता में अत्यंत संयम से घर चलाती थीं। कई बार सावरकर बंधुओं के क्रांतिकारी साथी भोजन के लिए घर आते। येसूभाभी, बची हुई एकमात्र रोटी के चार टुकड़े कर चटनी के साथ उन्हें परोस देतीं तथा स्वयं पानी पीकर सो रहतीं। इसके परिणाम स्वरूप उनके नवजात शिशु अकाल मृत्यु को प्राप्त हो गए।

विवाहपूर्व परिचय होने के कारण येसूभाभी तथा यमुना देवरानी-जेठानी जैसी न रहकर सहेलियों जैसी रहतीं। विनायक ने नासिक फिर कोठूर, त्र्यंबकेश्वर, भगूर आदि गाँवों में 'अभिनव भारत' नामक सशस्त्र क्रांतिकारी संगठन की शाखाएँ खोलीं। गणेश तथा विनायक पढ़ाई के लिए नासिक में इकट्ठे रहते थे तब यह संस्था स्थापित की गई थी।

वे लोग अभिनव भारत के स्वतंत्रता के ध्येय का प्रचार करते समय विनायक द्वारा लिखी गई 'सिंहगढ़', 'बाजीप्रभु देशपांडे' कवि गोविन्द आदि की देशभक्ति की रचनाएँ कहते। इन कविताओं को विनायक येसूभाभी को याद करवाते। उनके परिचित तथा सहेलियों को इकट्ठा कर क्रांतिकारियों को मदद करने तथा स्वातंत्र्य व स्वदेशी का महत्त्व स्त्रियों में फैलाने के लिए येसूभाभी ने 1905 में 'आत्मनिष्ठ युवती समाज' की स्थापना की। वहाँ वे देशभक्ति की कविताओं का अर्थ बतातीं तथा स्त्रियों को कवितायें याद करवातीं। यह साप्ताहिक बैठक प्रत्येक शुक्रवार को होती। आत्मनिष्ठ युवती समाज संस्था अभिनव भारत से संलग्न थी। इस संस्था का उद्देश्य क्रांतिकार्य में भाग लेने वाले मित्रों के कुटुंब तथा अन्य महिलाओं में स्वदेशी व क्रांतिकार्य में पुरुषों को प्रोत्साहन देना था। इन साप्ताहिक बैठकों में येसूभाभी लोकमान्य तिलक द्वारा लिखे गये 'केसरी' अखबार के लेखों तथा ब्रिटिशों के अन्यायपूर्ण शासन के विरुद्ध लेख पढ़कर बतातीं। इन सबका इस संस्था की महिलाओं पर स्फूर्तिदायक परिणाम होता है। स्त्रियों में राष्ट्रीय वृत्ति का निर्माण, स्वातंत्र्य हलचल का महत्त्व तथा राजनैतिक परिस्थिति का ज्ञान होता। ब्रिटिश आतंक की भयग्रस्त परिस्थिति के बावजूद आत्मनिष्ठ युवती समाज की 100-150 महिला सभासद थीं। ये सक्रिय महिला कार्यकर्ता स्वयं स्वदेशी का प्रयोग करतीं तथा अन्यों को विदेशी का बहिष्कार करने के लिए प्रेरित करतीं। 1908 में लोकमान्य तिलक पर मुकदमा दायर होने पर इन्होंने तिलक बचाव निधि इकट्ठा कर भेजी थी।

अपनी महान भारतीय संस्कृति में बड़ी भाभी को माता का दर्जा दिया है। यह मान सम्मान विनायक ने अपनी भाभी को दिया। 1909 ई. में गणेश को कालापानी की सजा हुई तब येसूभाभी पर आसमान फट पड़ा। विनायक ने उन्हें सांत्वना देते हुए अत्यंत मार्मिक पत्र (कविता) लिखा। तब वे पढ़ाई के लिए इंग्लैंड गये हुए थे तथा वहीं से 'इंडिया हाऊस' से स्वतन्त्रता हेतु सूत्र संचालन करते थे। वे लिखते हैं, अनेक पुष्प खिलते हैं तथा सूख जाते हैं। कोई उनकी गिनती नहीं करता; परन्तु जब गजेन्द्र हाथी पानी में फंस गया, मगर ने उसका पैर पकड़ लिया तथा उसके प्राण संकट में फंसे तब उसने भगवान विष्णु का मन से स्मरण किया तथा विष्णु को अर्पण करने हेतु तालाब का एक कमलपुष्प उखाड़कर श्रीहरि को अर्पण किया। वह कमलपुष्प अमर हो गया क्योंकि वह श्रीहरि के चरणों पर विराजमान हुआ। ऐसे ही अनेक लोग पैदा होते हैं तथा मर जाते हैं; परन्तु भारत माता के स्वातंत्र्य के लिए जो अपना जीवनपुष्प समर्पित करते हैं उनका जीवन धन्य होता है। वे पवित्र मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

यशोदा, त्र्यंबकेश्वर के श्री नानाराव फडके की भतीजी थीं। माता-पिता का बचपन में ही स्वर्गवास हो गया था। श्री गणेश सावरकर के साथ उनका विवाह 1896 में हुआ। येसूभाभी स्वभाव से ममतामयी, परोपकारी थीं। विनयक की माता राधाबाई की मृत्यु के उपरांत घर का जो आनंदमय वातावरण नष्ट हो गया था वह येसूभाभी के आगमन से पुनः जीवित हो उठा। येसूभाभी की समरणशक्ति बहुत तीक्ष्ण थी। उस समय के रिवाज के मुताबिक उन्हें 50-60 गीत याद थे जिसे वे मधुर स्वर में गाती थीं। विनायक ने आग्रह करके भाभी को पढ़ना लिखना सिखाया।

गणेश सावरकर की गिरफ्तारी के समय उन्हें हाथ-पैर में बेड़ियाँ डालकर, कमर में जंजीर बांधकर, हाथ में अल्यूमिनियम का बर्तन देकर, सिर पर कपड़ों की पोटली रखकर संपूर्ण शहर की गलियों में नंगे पैर अपमानास्पद तरीके से घुमाया गया। अंग्रेज सैनिकों ने उनके घर में घुसकर, जूते से उनकी पूजा की मूर्तियाँ तोड़ डालीं, घर को सील कर दिया। इस भयंकर अपमान तथा तनाव की स्थिति में येसूभाभी क्रांतिकार्य के दस्तावेज सुरक्षित तथा गुप्त जगहों पर पहुँचाती रहीं। अपनी देवरानी को वे पहले ही उनके मायके पहुँचा आईं थीं।

सावरकर येसूभाभी का त्याग अनुपम है। इस मानिनी को बहुत उपेक्षा सहन करनी पड़ी। उम्रकैद की सजा प्राप्त कैदी की पत्नी होने से लोगों ने उनसे संपर्क तोड़ दिया। उनके लिए मायके के दरवाजे बंद हो गए। उन्हें लोगों ने उत्सव, समारंभों में बुलाना बंद कर दिया। उपजीविका हेतु कुछ काम किया जाये तो कोई काम नहीं देता था। घर पर अनेक बार जप्ती आई थी, फिर भी ये सचमुच 'धैर्य की मूर्ति' थी।

येसूभाभी को अनेकानेक प्रणाम। ❑

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की साहसी वीरांगनाएँ

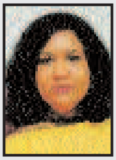

प्रो. सुषमा यादव

सदस्य, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, दिल्ली

स्वतंत्रता का अमृत महोत्सव एक ऐसा समय है जिसमें यह याद करना आवश्यक है कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की क्या भूमिका रही? स्वतंत्रता प्राप्ति के इस अभियान में उनका योगदान क्या था? कौन कौन-सी वीरांगनाओं ने भारत की स्वतंत्रता में अपना अहम योगदान दिया ? वर्तमान समय में परतत्रंता से स्वाधीनता की यात्रा में उनकी क्या भूमिका होनी चाहिए?

आने वाली पीढ़ियों को संस्कारित कैसे किया जाए।

सन् 1857 में मेरठ छावनी तथा देश में अन्य स्थानों पर प्रथम स्वतंत्रता संग्राम प्रारम्भ हुआ। वहाँ से प्रेरित होकर स्वतंत्रता प्राप्ति के अनेक प्रयास किये गए, और अंतत: इन सब प्रयासों के साथ ही अनेक देशभक्त युवाओं के बलिदान से 15 अगस्त, 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ। अंग्रेजों के विरुद्ध इस संघर्ष में पुरुषों के साथ महिलाओं की सक्रिय भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही प्रथम स्वाधीनता संग्राम में महारानी लक्ष्मीबाई, झलकारी बाई, बेगम हजरत महल, रानी चेन्नमा आदि वीरांगनाओं के साहस और सक्रिय योगदान को कभी भुलाया नही जा सकता।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अनेक महिलाओं ने अपनी साहसिक भागीदारी, बलिदान, सहयोग और प्रेरणा देकर भूमिका निभाई। महिलाओं ने आंदोलन में भाग लेने वालों, जेल जाने वालों, फांसी के फंदों पर झूलने वालों को तिलक लगाकर और राखी बाँधकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने की, बलिदान की प्रेरणा प्रदान की और अंग्रेजों के खिलाफ होने वाले आंदोलनों में कंधे से कंधा मिलाकर उनमें जोश जगाने का प्रेरणात्मक कार्य किया। इन वीरांगनाओं का परिचय हमारी युवा पीढ़ी को मिले तो वह गौरवांवित होंगी।

इतिहास में कुछ पीछे चलें तो एक नाम सुनने को मिलेगा, वह नाम है वर्ष 1824 में फिरंगियों भारत छोड़ो का बिगुल बजाने वाली कित्तूर (कनार्टक) की रानी चेनम्मा का, जिन्होंने रणचंडी का रूप धरकर अपने अदम्य साहस व फौलादी संकल्प की बदौलत अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए। रायगढ़ की रानी अवंती बाई ने अंग्रेजों की नीतियों से चिढ़कर उनके विरुद्ध संघर्ष का ऐलान कर दिया और मंडला के खेटी गाँव में मोर्चा जमाया।

उन्होंने अंग्रेज सेनापति वार्टर के घोड़े के दो टुकड़े कर दिए और उसके वो छक्के छुड़ाए कि वार्टर रानी के पैरों पर गिरकर प्राणों की भीख माँगने लगा।

रानी ने उसे माफ़ तो किया पर फिर उसी के हाथों धोखा खा गई। फिर उन्होंने जंगलों में रहते हुए सैन्य संचालन किया। जब ऐसा लगा कि अब तो अंग्रेज़ों की विशाल सेना के समक्ष समपर्ण करना ही होगा तो उन्होंने समर्पण करने के बजाय तलवार अपने सीने में उतार ली और प्राण त्याग दिए।

वीरांगनाओं की सूची को आगे बढ़ाये तो मुग़ल सम्राट बहादुर शाह ज़फ़र की बेगम जीनत महल का नाम भी सामने आएगा जिन्होंने दिल्ली और आस-पास के क्षेत्रों में योद्धाओं को संगठित किया और देश प्रेम का परिचय दिया।

'मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी' कथन का उद्‌घोष करने वाली रानी लक्ष्मी बाई झाँसी का नेतृत्व करते हुए अपने छोटे से पुत्र को पीठ पर बाँधकर एक हाथ से घोड़े की रास संभालती तथा एक हाथ से तलवार भांजती रानी की तस्वीर आँखों के सामने उभर आती है। रानी को केवल अंग्रेजों का ही नहीं अपने ही भू-भाग के अन्य राजाओं का विरोध भी झेलना पड़ा था जो अंग्रेज़ों से मिले हुए थे तथा उनकी झाँसी पर नजर थी। रानी लक्ष्मी बाई ने महिलाओं की एक अलग टुकड़ी- 'दुर्गा दल' बनायी हुई थी। इसका नेतृत्व कुश्ती, घुड़सवारी और

धनुर्विद्या में माहिर झलकारी बाई के हाथों में था। झलकारी बाई ने कसम उठायी थी, कि जब तक झाँसी स्वतंत्र नहीं होगी,न ही मैं श्रृंगार करूँगी और न ही सिंदूर लगाऊँगी। अंग्रेजों ने जब झाँसी का किला घेरा तो झलकारी बाई जोशो-खरोश से लड़ी। चूँकि उसका चेहरा और कद-काठी रानी लक्ष्मी बाई से काफी मिलता जुलता था, सो जब उसने रानी लक्ष्मी बाई को घिरते देखा तो उन्हें महल से बाहर निकल जाने को कहा और स्वयं घायल सिंहनी की तरह अंग्रेजों पर टूट पड़ी और शहीद हो गयी।

01 जून 1857 को जब कानपुर में नाना-साहेब के नेतृत्व में तात्या टोपे, अजीमुल्लाह खान, बाला साहेब, सूबेदार टीकासी सिंह और शमसुद्दीन खान क्रांति की योजना बना रहे थे, तो उनके साथ उस बैठक में अजीजनबाई भी थी। इन क्रांतिकारियों की प्रेरणा से अजीजन ने मस्तानी टोली के नाम से 400 महिलाओं की एक टोली बनाई, जो मदार्ना भेष में रहती थी। बिठूर के युद्ध में पराजित होने पर अजीजन पकड़ी गई। यद्धबंदी के रूप में उसे जनरल हैवलॉक के समक्ष पेश किया गया। जनरल हैवलॉक उसके सौंदर्य पर रीझे बिना न रह सका और प्रस्ताव रखा कि यदि वह क्षमा माँग ले तो उसे माफ़ कर दिया जायेगा। किंतु अजीजन ने प्रस्ताव ठुकरा दिया और पलट कर कहा कि माफ़ी तो अंग्रेजों को माँगनी चाहिए, जिन्होंने इतने जुल्म ढाये। इस पर आग बबूला हो हैवलॉक ने अजीजन को गोली मारने के आदेश दे दिए। क्षण भर में अजीजन को गोली मार दी गई।

यह भी कम ही लोगों को ज्ञात होगा कि बैरकपुर में मंगल पाण्डेय को चर्बी वाले कारतूसों के बारे में सवप्रथम मातादीन ने बताया और मातादीन को इसकी जानकारी उसकी पत्नी लज्जो ने दी। लज्जो अंग्रेज अफसरों के यहाँ काम करती थी, जहाँ उसे यह सुराग मिला कि अंग्रेज गाय की चर्बी वाले कारतूस इस्तेमाल करने जा रहे हैं अगर यह कहा जाए कि 1857 की जंग चिंगारी भड़काने और उसे हवा देने का काम नारी शक्ति ने किया तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

ऐसी एक वीरांगना ऊदादेवी थी, जिन्होंने पीपल के घने पेड़ पर छिपकर लगभग 32 अंग्रेज सैनिकों को मार गिराया। अंग्रेज असमंजस में पड़ गए और जब हल-चल होने पर कैप्टन वेल्स ने पेड़ पर गोली चलायी तो ऊपर से एक मानवाकृति गिरी । नीचे गिरने से उसकी लाल जैकट का उपरी हिस्सा खुल गया, जिससे पता चला कि वह महिला है । उस महिला का साहस देख के कैप्टन वेल्स की भी आँखे नम हो गई।

भारत की आज़ादी में नानासाहब की पुत्री नैना देवी के त्याग को भला कौन विस्मृत कर सकता है? मैना को क्रांति का एक महत्त्वपूर्ण कार्य सौंपा गया था। एक दिन मैना अंग्रेजों के द्वारा पकड़ ली गई। उसे बहुत प्रताड़ना दी गई ताकि वह अपने साथियों के नाम बता दें। किंतु मैना देवी ने नहीं बताया। परिणामत: मैना देवी को अंग्रेजों ने जिंदा जला डाला था। ऐसी कितनी वीरांगनाएं हैं, जिनका नाम तक इतिहास को पता नहीं है, जिन्होंने अपना मूक त्याग किया है। इतना ही नहीं, अपरोक्ष रूप से अपने कपड़े जेवर आदि के द्वारा सिपाहियों को सहयोग देने वाली स्त्रियों को तो हम नाम से जानते भी नहीं हैं। खाना, कपड़ा देना ही नहीं सैनिकों के लिए कपड़े सिलना, बुनना भी एक महत्वपूर्ण प्राथमिक कार्य था, जिसे महिलाओं ने देश की स्वतंत्रता के लिए किया।

रानी लक्ष्मी बाई ने महिलाओं की एक अलग टुकड़ी- 'दुर्गा दल' बनायी हुई थी। इसका नेतृत्व कुश्ती, घुड़सवारी और धनुर्विद्या में माहिर झलकारी बाई के हाथों में था। झलकारी बाई ने कसम उठायी थी, कि जब तक झाँसी स्वतंत्र नहीं होगी,न ही मैं श्रृंगार करूँगी और न ही सिंदूर लगाऊँगी। अंग्रेजों ने जब झाँसी का किला घेरा तो झलकारी बाई जोशो-खरोश से लड़ी। चूँकि उसका चेहरा और कद-काठी रानी लक्ष्मी बाई से काफी मिलता जुलता था, सो जब उसने रानी लक्ष्मी बाई को घिरते देखा तो उन्हें महल से बाहर निकल जाने को कहा और स्वयं घायल सिंहनी की तरह अंग्रेजों पर टूट पड़ी और शहीद हो गयी।

कनकलता बरुआ असम के सोनतपुर जिले के गोहपुर की रहने वाली थीं। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान उन की आयु मात्र 18 वर्ष की थी। स्थानीय लोग उन्हें 'बीरबाला' के नाम से जानते हैं। 20 सितंबर,1942 को भारी संख्या में लोग गोहपुर पुलिस चौकी पर शांतिपूर्ण तरीके से प्रदर्शन करने के लिये पहुँच रहे थे। उनका उद्देश्य पुलिस चौकी पर लगे यूनियन जैक को उतार कर भारतीय झंडा फहराना था। कनकलता महिलाओं के समूह का प्रितिनिधत्व कर रही थीं। थाने के दरोगा की धमकी देने पर भी वो नहीं मानी और झंडा लेकर आगे बढ़ती रहीं। आखिरकार वो पुलिस की गोली का शिकार हुईं और शहीद हो गईं।

राजकुमारी अमृत कौर ने भारत छोड़ो आंदोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। वो पंजाब के कपूरथला राजघराने से संबंधित थीं तथा लंदन से पढ़ाई करने के बाद वो भारत लौटीं। वो गांधीजी के विचारों से काफी प्रभावित थीं तथा नमक सत्याग्रह में भी उन्होंने अपना योगदान दिया था। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र शिक्षा के माध्यम से महिलाओं तथा हरिजन समाज को सशक्त बनाना था। वह अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संगठन की अध्यक्ष भी रही थीं। भारत छोड़ो आंदोलन में वो लोगों के साथ मिलकर जुलूस निकालती और विरोध प्रदशर्न करती थीं। शिमला में 9 से 16 अगस्त के बीच उन्होंने प्रतिदिन

जुलूस निकाला तथा पुलिस ने उन पर 15 बार लगातार निर्दयता से लाठी चार्ज किया। अंततः सरकार ने उन्हें बाहर छोड़ना उचित नहीं समझा तथा कालका में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया।

अनुसूयाबाई काले महाराष्ट्र की थीं परंतु इनका मुख्य कार्यक्षेत्र मध्यप्रदेश था। वर्ष 1920 में उन्होंने महिलाओं का एक संगठन भगिनी मंडल की स्थापना की। इसके अलावा वो अखिल भारतीय महिला सभा की सक्रिय सदस्य रहीं। वर्ष 1928 में अनुसूयाबाई केंद्रीय प्रांत विधानमंडल की सदस्य नियुक्त हुईं तथा इसकी उपाध्यक्ष भी रहीं। लेकिन शीघ्र ही नमक सत्याग्रह के बाद गाँधीजी की गिरफ्तारी के बाद उन्होंने अपना पद त्याग दिया तथा गाँधीजी की रिहाई के लिये प्रदर्शन करने लगीं। उनकी राजनैतिक गतिविधियों के लिए उन्हें कई बार गिरफ्तार किया गया। वर्ष 1937 में हुए प्रांतीय चुनाव में विधानमंडल की उपाध्यक्ष चुनी गईं लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध प्रारंभ होने और भारत को जबरन उसमें शामिल करने के बाद काँग्रेस के आह्वान पर उन्होंने फिर अपना पद छोड़ दिया। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान महाराष्ट्र के अश्ती तथा चिमूर में आदिवासियों के साथ किए गए सरकार के दमन के विरुद्ध उन्होंने आवाज़ उठाई। इसके अलावा अश्ती तथा चिमूर में हुए विद्रोह में 25 लोगों को हुई फाँसी की सजा हुई थी जिन्हें उनके प्रयासों से बचाया जा सका।

सरोजनी नायडू प्रारंभ से आज़ादी के संघर्ष में सक्रिय रहीं थीं। उन्होंने धरसाना नमक सत्याग्रह के दौरान गाँधीजी व सभी अन्य नेताओं की गिरफ्तारी के बाद सत्याग्रहियों का नेतृत्व किया। 3 दिसंबर, 1940 को विनोबा भावे के नेतृत्व में हुए व्यक्तिगत सत्याग्रह में हिस्सा लेने के कारण पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया लेकिन स्वास्थ्य के कारणों से उन्हें शीघ्र ही जेल से रिहा कर दिया गया। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान गिरफ्तार हुए प्रमुख नेताओं में वो भी शामिल थीं। उन्हें पुणे के आगा खाँ महल में रखा गया था। 10 महीने के बाद जेल से वो रिहा हुई तथा फिर से राजनीति में सिक्रय हुईं।

कमलादेवी चट्टोपाध्याय नमक सत्याग्रह तथा सविनय अवज्ञा आंदोलन से ही राजनीति में सक्रिय रहीं थीं। उसके बाद वो लगातार स्वतंत्रता संघर्ष के लिए होने वाले आंदोलनों में भागीदारी देती रहीं। अपने राजनैतिक संघर्ष के दौरान उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान उन्हें भी गिरफ्तार किया गया। जेल से छूटने के बाद वो अमेरिका गईं तथा वहाँ के लोगों को भारत में ब्रिटिश हुकूमत की सच्चाई के बारे में बताया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कमला देवी चट्टोपाध्याय ने अपना समय भारत की कला, संस्कृति तथा दस्तकारी के उत्थान में लगाया व सहकारी संगठनों की स्थापना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

भारत छोड़ो आंदोलन के प्रारंभ होने के बाद जब सभी मुख्य काँग्रेसी नेता गिरफ्तार कर लिए गए तब जिन लोगों ने गुप्त तरीके से आंदोलन को चलाया उनमें से ऊषा मेहता प्रमुख नाम है। जिन कुछ सदस्यों ने मिलकर भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान होने वाली सभी घटनाओं को जनता तक पहुँचाया। रेडियो के माध्यम से उषा मेहता ने भारत छोड़ो आंदोलन में अभूतपूर्व योगदान दिया। उनके द्वारा देश भर के विभिन्न स्थानों से आने वाली क्रांति की खबरें इस पर प्रसारित की जाती थीं। जिसकी वजह से स्थानीय स्तर पर आंदोलन कर रहे सत्याग्रिहयों को हौसला मिलता था। इसे रेडियो के माध्यम से चटगाँव बम ब्लास्ट, जमशेदपुर हड़ताल तथा अश्ती और चिमूर में पुलिस की बबर्रता को प्रसारित किया गया।

इतिहास के पन्नो में न जाने ऐसी कितनी दास्तान हैं, जहाँ वीरांगनाओं ने अपने साहस और जीवटता के दम पर अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए। न जाने कितनी महिलाओं ने जान की बजी लगा दी, अपना लहू बहाया और शहीद हो गई। सावित्री बाई फूले, दुर्गाबाई देशमुख, अरुणा आसफ अली, सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा गाँधी, मैडम भीकाजी कामा, एनी बेसेंट, लक्ष्मी सहाल इत्यादि के नाम को भुलाया नहीं जा सकता।

स्वतंत्रता के 75 वर्षों के बाद भी भारतीयों के दिलों में उन वीरांगनाओं के लिए सम्मान कम नहीं हुआ है, जिन्होंने भारत को आजाद करवाने में अहम भूमिका निभाई थी। अतः स्वतंत्रता का अमृत महोत्सब इन सब वीर महिलाओं की स्मृति का महोत्सव ही है। ❑

रानी अवंती बाई लोधी भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली प्रथम महिला शहीद वीरांगना थी। जो मध्य भारत के रामगढ़ की रानी थी। 1857 की क्रांति में अंग्रेजों के खिलाफ साहस भरे अंदाज से लड़ने और उनकी नाक में दम कर देने के लिए उन्हें याद किया जाता है। 1857 की क्रांति में रामगढ़ की रानी अवंती बाई रेवांचल में मुक्ति आंदोलन की सूत्रधार थी। अट्ठारह सौ सत्तावन के मुक्ति आंदोलन में इस राज्य की अहम भूमिका थी जिससे भारत के इतिहास में एक नई क्रांति आई।

भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

दीप्ति चतुर्वेदी
सहायक आचार्य
(राजनीति विज्ञान)
राजकीय बांगड़ महाविद्यालय,
पाली (राज.)

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास स्वतंत्रता के लिए भारतीयों के संघर्ष की अद्भुत गाथा है। इस संघर्ष में पुरुषों और महिलाओं ने समान रूप से भाग लिया। भारतीय महिलाओं का योगदान इसमें इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि उनका सामाजिक उत्थान हुए बहुत लंबा समय व्यतीत नहीं हुआ था। घर का मोर्चा हो या राजनीति का क्षेत्र महिलाओं ने जिस साहस, सहिष्णुता और वीरता से स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी भूमिका निभाई वह इतिहास की धरोहर है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में 1857 की क्रांति को भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम कहा जाता है, यह एक बहुत ही प्रभावशाली आंदोलन था, जिसने ईस्ट इंडिया कंपनी से सत्ता को हस्तांतरित करके सीधे अंग्रेजी सरकार के हाथों में लाने को मजबूर कर दिया। यह बात सही है कि भारत को आजादी 1947 में मिली, लेकिन इसकी नींव 1857 की क्रांति ने रखी। 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में भारत की वीरांगनाओं के साहस और सक्रिय योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता। जिक्र है ऐसी वीरांगनाओं का जिन्होंने 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अपनी सराहनीय भूमिका निभाई।

रानी अवंती बाई लोधी

रानी अवंती बाई लोधी भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली प्रथम महिला शहीद वीरांगना थी। जो मध्य भारत के रामगढ़ की रानी थी। 1857 की क्रांति में अंग्रेजों के खिलाफ साहस भरे अंदाज से लड़ने और उनकी नाक में दम कर देने के लिए उन्हें याद किया जाता है। 1857 की क्रांति में रामगढ़ की रानी अवंती बाई रेवांचल में मुक्ति आंदोलन की सूत्रधार थी। अट्ठारह सौ सत्तावन के मुक्ति आंदोलन में इस राज्य की अहम भूमिका थी जिससे भारत के इतिहास में एक नई क्रांति आई। भारत में पहली महिला क्रांतिकारी रामगढ़ की रानी अवंती बाई ने अंग्रेजों के विरुद्ध ऐतिहासिक निर्णायक युद्ध किया। जो भारत की आजादी में बहुत बड़ा योगदान है। रामगढ़ की रानी अवंती बाई का नाम पूरे भारत में अमर शहीद वीरांगना रानी अवंती बाई के नाम से प्रसिद्ध है।

रानी चैनम्मा

चैनम्मा कर्नाटक की कित्तूर राज्य की रानी थी। उन्होंने मुंबई प्रेसिडेंसी के लेफ्टिनेंट गवर्नर लॉर्ड एलफिंस्टन को हड़प नीति नहीं लागू करने का पत्र भेजा था। उन्होंने राज्य हड़प नीति के विरुद्ध अंग्रेजों से सशस्त्र संघर्ष किया था। भले ही अंग्रेजों की सेना के मुकाबले उनके सैनिकों की संख्या कम थी उनको गिरफ्तार किया गया, लेकिन ब्रिटिश शासन के खिलाफ बगावत का नेतृत्व करने के लिए उन्हें याद किया जाता है। रानी चेन्नम्मा को 'कर्नाटक की लक्ष्मीबाई' भी कहा जाता है।

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई

मराठा शासित झांसी राज्य की रानी लक्ष्मीबाई थी, जिनका नाम मणिकर्णिका तांबे था उनका जन्म वाराणसी में 29 नवंबर 1835 को हुआ सब उनको प्यार से मनु कह कर पुकारा करते थे। भारत में जब भी महिलाओं के सशक्तीकरण की बात होती है तो वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई की चर्चा जरूर होती है। वह एक आदर्श भी हैं उन सभी महिलाओं के लिए जो खुद को बहादुर मानती हैं। देश के पहले स्वतंत्रता संग्राम में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली लक्ष्मीबाई के अप्रतिम शौर्य से चकित अंग्रेजों ने भी उनकी प्रशंसा की थी। वे अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति की शहीद वीरांगना थी उन्होंने सिर्फ 29 वर्ष की आयु में अंग्रेजी साम्राज्य की सेना से युद्ध किया और रणभूमि में वीरगति को प्राप्त हुई।

बेगम हजरत महल

1857 में हुई आजादी की पहली लड़ाई में अपनी बेहतरीन संगठन शक्ति और बहादुरी से अंग्रेजी हुकूमत को नाकों चने चबाने पर बेगम हजरत महल ने मजबूर कर दिया। जंगे आजादी के सभी केंद्रों में अवध सबसे अधिक समय तक आजाद रहा। इसी बीच बेगम हजरत महल ने लखनऊ में नए सिरे से शासन संभाला और बगावत की शुरुआत की। लगभग पूरा अवध उनके साथ रहा। उन्होंने जंगे आजादी के दौरान नजरबंद किए गए अपने पति वाजिद अली शाह को छुड़ाने के लिए लॉर्ड कैनिंग के सुरक्षा दस्ते में भी सेंध लगाई। बेगम हजरत महल अंग्रेजों के समक्ष आत्मसमर्पण कर अपमानित होने के बजाय नेपाल की ओर चल पड़ी, जहाँ वनवास में उनकी मृत्यु हुई।

रानी द्रौपदी बाई

रानी द्रौपदी बाई धार क्षेत्र की क्रांति की सूत्रधार थी। 22 मई अट्ठारह सौ सत्तावन को धार के राजा का देहावसान हो गया। राजा की बड़ी रानी द्रौपदी बाई को राज्य भार संभालना पड़ा क्योंकि आनंद राव बाला साहब नाबालिग थे, अन्य राजवंशों के विपरीत अंग्रेजों ने धार के नाबालिग राजा आनंद राव को मान्यता प्रदान की क्योंकि वह चाहते थे कि क्रांति में धार क्रांतिकारियों का साथ ना दें, परंतु रानी द्रौपदी के हृदय में क्रांति की ज्वाला धधक रही थी, रानी के कार्यभार संभालते ही धार क्षेत्र में क्रांति की लपटें फैल गई। 1857 की क्रांति में क्रांतिकारियों की हर संभव सहायता रानी ने की। अंग्रेजों ने 22 अक्टूबर 1857 को धार का किला घेर लिया था परंतु क्रांतिकारियों ने उनका डटकर मुकाबला किया।

अंग्रेजों को आशा थी कि वह शीघ्र समर्पण कर देंगे, परंतु ऐसा नहीं हुआ। 24 से 30 अक्टूबर तक संघर्ष चलता रहा, किले की दीवार में दरार पड़ने के कारण अंग्रेज सैनिक किले में घुस गए। रानी द्रौपदी क्रांतिकारियों सहित गुप्त रास्ते से निकल गई।

महारानी तपस्विनी

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की भतीजी और बेलूर के जमींदार नारायण राव की बेटी महारानी तपस्विनी की वीरता की प्रसिद्धि दूर-दूर तक थी। उन्हें माता जी के नाम से बुलाया जाता था। वह एक बाल विधवा थी बचपन से ही उन में राष्ट्रप्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी, जब अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति का बिगुल बजा तब रानी तपस्विनी ने भी अपनी चाची के साथ इस क्रांति में सक्रिय रूप से भाग लिया और उनके प्रभाव के कारण अनेक लोगों ने इस क्रांति में अहम भूमिका निभाई। अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति की विफलता के बाद उन्हें तिरुचिरापल्ली की जेल में रखा गया, बाद में वह नाना साहब के साथ नेपाल चली गई जहाँ उन्होंने नेपाल में बसे भारतीयों में देशभक्ति की भावना की अलख जगाई।

झलकारी बाई

झलकारी बाई का जन्म बुंदेलखंड के एक गाँव में एक निर्धन कोली परिवार में हुआ था, वे बचपन से ही साहसी और दृढ़ प्रतिज्ञ बालिका थी। झलकारी बाई का विवाह झांसी की सेना में सिपाही रहे पूरण कोहली के साथ हुआ था, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की नियमित सेना में वह महिला शाखा दुर्गा दल की सेनापति थी वह लक्ष्मीबाई की हमशक्ल भी थी इसी कारण शत्रु को धोखा देने के लिए रानी के वेश में युद्ध करती थी। सन 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में रानी लक्ष्मीबाई के अंग्रेजों से घिर जाने पर झलकारी बाई ने बड़ी सूझबूझ, स्वामिभक्ति और राष्ट्रीयता का परिचय दिया था।

महावीरी देवी

1857 की क्रांति के शहीदों में महावीरी देवी वाल्मीकि का नाम लिया जा सकता है। महावीरी देवी उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के मुंड भर नामक गाँव की रहने वाली थी वह वाल्मीकि समाज की जाति में जन्मी थी और शुरू से ही वाल्मीकि समाज के लिए सामाजिक सुधारों पर जोर देती रही। इसी कड़ी में उन्होंने सामाजिक कुप्रथा के प्रति अपनी आवाज उठाई। उन्होंने 22 सदस्यों को लेकर एक महिला टोली बनाई। जब अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति का बिगुल बजा तो महावीरी देवी भी अपनी 22 सदस्य-टोली के साथ भारत की आजादी की लड़ाई में कूद पड़ी। इस टोली ने कई सारे अंग्रेजों को मौत के घाट उतारा। महावीरी देवी अपनी अंतिम सांस तक लड़ती रही, जब तक कि उनके सभी सदस्य नहीं मारे गए और अंत में अंग्रेजी हुकूमत के हाथों मारी गई।

इस प्रकार स्पष्ट है कि असंख्य महिलाओं के 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के कारण ही आजादी का यह महान आंदोलन सक्रिय बन गया। स्त्रियों ने देश के प्रति प्रेम भावना का परिचय देते हुए और उसे स्वतंत्र कराने के लिए सभी तरीकों से अपना योगदान दिया। इन वीरांगनाओं के साहस और सक्रिय योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता। ❑

स्वतंत्रता आंदोलन एवं नारी शक्ति

डॉ. सुमन बाला
वरिष्ठ व्याख्याता,
हरिभाऊ उपाध्याय महिला
शिक्षण महाविद्यालय,
हटूण्डी (अजमेर)

हमारे देश में स्वतंत्रता का अमृत-महोत्सव बड़े धूम-धाम से मनाया जा रहा है। चारों तरफ इस पूरे वर्षभर भाँति-भाँति के आयोजनों की चहल-पहल रही है। देश जब अपनी आजादी के 75 वर्ष पूर्ण कर रहा है तब यह आवश्यक हो जाता है कि- उन वीरों एवं वीराँगनाओं के साहसिक कार्यों से देशवासियों को रूबरू करवाया जाए; जिन्होंने इस आजादी को प्राप्त करने के लिए अपने प्राणों तक की परवाह नहीं की। अकसर स्वतंत्रता आंदोलन में वीरों के योगदान के विषय में कई प्रसंग और कहानियाँ तो सुनने को मिलती है; परन्तु इस स्वतन्त्रता समर में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली उन वीराँगनाओं को याद करना हम भूल जाते हैं, उन्होंने अपनी निडरता और साहसिक कार्यों से तात्कालिक अंग्रेजी शासन की नींद उड़ा दी थी।

प्राचीन काल से हमारे देश में महिलाओं का गौरवगान जितना हुआ है उतना अन्यत्र किसी देश में नहीं हुआ होगा। भारत की प्राचीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि - उस समय समाज में महिलाओं का स्थान बड़ा गरिमामय था। वह चाहे परिवार में हो अथवा समाज में महिला चाहे माँ हो अथवा पत्नी, वह चाहे भक्ति रूप में हो चाहे शक्ति रूप में, वह चाहे उत्पादिका रूप में हो चाहे पोषिका रूप में, वह चाहे शिक्षा में हो अथवा शास्त्रार्थ में, उनका स्थान अत्यन्त विशिष्ट तथा प्रतिष्ठापूर्ण रहा है। भारतीय महिलाओं ने हर क्षेत्र में और सभी कार्यों में पुरुषों के बराबर भागीदारी निभाई है। इन्हीं सब गुणों एवं विशेषताओं ने भारतीय जनमानस उसे (नारी) सृष्टि-निर्माता की अद्वितीय कृति मानते हुए गौरवपूर्ण एवं सम्मानीय स्थान पर आसीन करता रहा है। महिला को कोमलता, पवित्रता, मधुरता जैसे दिव्य गुणों की प्रतिमूर्ति मानते हुए उसे शक्ति स्वरूपा के रूप में भी हमारे धर्म-ग्रंथों और शास्त्रों में वर्णित और प्रतिष्ठित किया गया है। नारी को शक्ति स्वरूपा मानकर उसकी स्तुति 'या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता' से तो हम सब परिचित हैं; परन्तु सृष्टि-सर्जन और सृष्टि का विकास करने वाली इस असीम शक्ति की स्वामिनी का मान और स्थान मध्यकाल में रसातल में चला गया, जिसका भान हमें उस काल के साहित्य में उसे पराधीन, माया और केवल उसके बाहरी सौंदर्य के उल्लेखों से होता है। इस काल से पूर्व तो प्रत्येक युग में उसका

व्यक्तित्व और कृतित्व अद्वितीय, अनुपम, अदम्य और अद्भुत रहा है। दुष्ट मर्दन में चंडी, संग्राम में कैकेयी श्रद्धा में सबरी, पवित्रता में सीता एवं सावित्री, अनुराग में राधा, विद्वत्ता में गार्गी, मैत्रेयी, अपाला, घोषा, विद्योत्तमा आदि के रूप में उसकी पहचान रही है।

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में भी महिलाओं के योगदान को नजर-अंदाज नहीं किया जाना चाहिए। इस आजादी के संघर्ष में महिलाएँ, परिवार और समाज की अपनी जिम्मेदारियों के निर्वाह करने के साथ-साथ परतंत्रता की बेड़ियों को छिन्न-भिन्न करने में भी अपनी जान की बाजी लगाने से पीछे नहीं हटी। इन वीराँगनाओं ने समाज के प्रत्येक वर्ग और आयु की महिलाएँ सम्मिलित रही थी। एक और जहाँ 70 वर्ष की भागेश्वरी देवी ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' के समय असम के नौ-गाँव कस्बे में अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति का नेतृत्व किया और अंग्रेजों ने उनके शरीर को गोलियों से छलनी कर दिया था, वहीं 14 व 15 वर्षीय सुनीति चौधरी और शांति घोष ने इतनी कम उम्र में क्रांतिकारी होने का गौरव प्राप्त कर आजीवन कारावास की सजा पाई। एक ओर जहाँ राजघरानों की महिलाओं ने स्वतंत्रता संग्राम में भागीदारी से लेकर नेतृत्व करने का कार्य किया वहीं देश की आम महिलाओं ने हर संभव सहायता देकर राष्ट्र के प्रति अपने धर्म का निर्वाह विपरीत से विपरीत परिस्थितियों में भी किया। स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाली इन महिलाओं में तवायफ हैदरीबाई जैसी महिलाएँ भी अपने फर्ज से पीछे नहीं हटी। लखनऊ की बेगम हजरत महल, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, ऊदा देवी, आशा देवी, नामकौर, राजकौर, हबीबा, गुर्जरी देवी, भगवानी देवी, रहोमी गुर्जरी, रानी राजेश्वरी देवी, बेगम आलिया, रानी तलमुंद कोइर, ठाकुराइन सन्नाथ कोइर, सोंगरा बीबी, झलकारी बाई, तवायफ अजीजन बाई, मस्तानी बाई, मैनावती, महावीरी देवी, चौहान रानी, अवन्ती बाई, जैतपुर की रानी, तेजपूर की रानी चौहान, माकी मुँडा, नागा रानी गुइँदाल्यू, सुहासिनी अली, रेणु सेन, दुर्गा देवी बोहरा (दुर्गा भाभी), सुशीला दीदी, सरोजिनी नायडू, सुचेता कृपलानी, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, अरूणा आसफ अली, उषा मेहता, कस्तूरबा गांधी, सुशीला नैयर, विजय लक्ष्मी पंडित, कैप्टन लक्ष्मी सहगल, ले. मानवती आर्या सहित लंदन में जन्मी एनीबेसेन्ट, भारतीय मूल की फ्रांसीसी नागरिक मैडम भीकाजी कामा, आयरलैण्ड की मूल निवासी और स्वामी विवेकानन्द जी की शिष्या मारग्रेट नोबुल (भगिनी निवेदिता), इंग्लैंड के एडमिरल की पुत्री मैडेलिन, ब्रिटिश महिला म्यूरियल लिस्टर और भी कितनी ही अनाम महिलाओं ने भारत की आजादी के लिए अपना योगदान दिया। स्वतन्त्रता आंदोलन की बहुत-सी महिलाओं को इतिहास ने विस्मृत भी कर दिया हो; परन्तु उनके गौरवमयी बलिदान हमेशा हमारे लिए प्रेरणा स्रोत के रूप में अमूल्य एवं अतुल्य रहेगा। नेताजी सुभाष चंद्र बोस भी नारी क्षमताओं और उनके युद्ध कौशल पर अगाध भरोसा रखते थे। इसी विश्वास की बुनियाद पर उन्होंने अपनी आजाद हिंद फौज में महिला रेजिमेंट का गठन भी किया, जिसका नाम लक्ष्मीबाई रेजिमेंट रखा और उसकी कैप्टन लक्ष्मी सहगल थी।

देश के स्वतंत्रता आंदोलन में रानी चेन्नमा का नाम भी अविस्मरणीय है, जिन्होंने दो बार अंग्रेजी सेना को युद्ध के मैदान से भगा दिया और अंत में गिरफ्तार हुई। जेल में ही उनकी मृत्यु हुई। वे अपने पीछे शौर्य और देशभक्ति की एक ऐसी कहानी छोड़ गई जिससे भारत के लोग सदा प्रेरणा लेते रहेंगे। डलहौजी की हिन्दुस्तान के राज्यों को हड़पने की नीति के तहत जब तत्कालीन अंग्रेजी सरकार ने उनके दत्तक पुत्र को कित्तूर का उत्तराधिकारी मानने से इनकार करके इसे अपने अंग्रेजी राज में मिलाना चाहा तो वीरांगना रानी चेन्नमा ने कहा था – ''कित्तूर पर अंग्रेजों का अधिकार कभी

नहीं होगा। मैं कित्तूर की स्वतंत्रता के लिए युद्ध करूँगी, अंतिम सांस तक युद्ध करूँगी।'' इस वीर रानी का जन्म काकतीय राजवंश में हुआ और चेन्नमा नाम उनकी सुन्दरता को देखकर ही रखा गया क्योंकि इस शब्द का अर्थ ही वह जो देखने में अति सुन्दर ही होता है। रानी चेन्नमा ना केवल रूपवती बल्कि उतनी ही गुणवती भी थी। वे कन्नड़, उर्दू, मराठी, संस्कृत आदि भाषाओं के साथ-साथ घुड़सवारी और शस्त्र विद्या की भी जानकार थी। उनका विवाह कित्तूर के राजा मल्लसर्ज से हुआ और उस समय कित्तूर राज्य बड़ा वैभवशाली था। कित्तूर व्यापार का बहुत बड़ा केन्द्र था जहाँ सोना, चाँदी और हीरे-जवाहरातों का बाजार लगा रहता था। वहाँ दूर-दूर से व्यापारी माल खरीदने और बेचने के लिए आते थे। यहाँ खेती भी बहुत अच्छी होती थी। राजा बड़े स्वाभिमानी, प्रजापालक और न्यायप्रिय थे; परंतु दुर्भाग्य से रानी चेन्नमा के पुत्र का स्वर्गवास अल्पायु में ही हो गया। पूना के राजा ने विश्वासघात से कित्तूर के राजा को बंदी बना लिया और बंदी गृह में ही उनकी मृत्यु हो गई। राजा की मृत्यु के पश्चात् चेन्नमा ने शिवलिंग रूद्रसर्ज नामक बालक को गोद ले लिया; परन्तु डलहौजी की देशी रियासतों को अंग्रेजी राज्य में मिलाने की नीति के तहत उनके दत्तक पुत्र को उत्तराधिकारी मानने से इंकार कर दिया। कित्तूर राज्य का वैभव उसे आकृष्ट कर रहा था और कित्तूर राज्य की स्वतन्त्रता उसे असह्य हो गई थी।

डलहौजी ने धारवाड़ कलेक्टर थैकरे के द्वारा रानी चेन्नमा को इसकी सूचना दी; परन्तु रानी पर इस सूचना का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। थैकरे की धमकी और प्रलोभनों से अविचलित रानी ने उत्तर दिया कि- ''मैं कित्तूर की स्वतंत्रता को बेचने से रणभूमि में मर जाना अच्छा समझती हूँ।'' इन दिनों इस राज्य की दो देशद्रोही मल्लपा सेट्टी और वैंकटराव थैकरे से जा मिले और आधा राज्य पाने के लालच में अपनी मातृभूमि से गद्दारी करने लगे। उन्होंने थैकरे को रानी के जीवित रहने तक अंग्रेजों का कित्तूर पर कब्जा होना नामुमकिन बताकर रानी को मारने अथवा बंदी बनाकर जेल में डालने की बात कही। थैकरे ने जब रानी को इस विषय में संदेश भिजवाया तो रानी चेन्नमा ने अपने दरबार के अनुभवी दीवान और योद्धाओं से परामर्श कर कित्तूर के लिए युद्ध करने और गुलामी की अपेक्षा मृत्यु की गोद में सो जाना अच्छा माना। इसके बाद थैकरे क्रुद्ध होकर युद्ध की तैयारियाँ करने लगा और रानी चेन्नमा भी गाँव-गाँव घूमकर जनता को गुलाम न बनकर कित्तूर के लिए अंतिम साँस तक युद्ध करने के लिए प्रेरित करने लगी। रानी चेन्नमा के प्रेरणादायी आह्वान से कित्तूर की जनता जाग गई और लोग धन और तन-मन से सेना में भर्ती हुए। 23 सितम्बर 1824 को थैकरे की सेना और रानी की सेना में भयंकर युद्ध हुआ। रानी ने बड़ी कुशलता और वीरता से अपनी सेना का संचालन किया। रानी द्वारा प्रोत्साहित सैनिक दुश्मन के लिए काल बनकर टूट पड़े और परिणामस्वरूप थैकरे की सेना के पैर उखड़ गए। सेना युद्ध के मैंदान से भाग खड़ी हुई और स्वयं थैकरे ने भी धारवाड़ में जाकर साँस ली।

प्राचीन काल से हमारे देश में महिलाओं का गौरवगान जितना हुआ है उतना अन्यत्र किसी देश में नहीं हुआ होगा। भारत की प्राचीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि — उस समय समाज में महिलाओं का स्थान बड़ा गरिमामय था। वह चाहे परिवार में हो अथवा समाज में महिला चाहे माँ हो अथवा पत्नी, वह चाहे भक्ति रूप में हो चाहे शक्ति रूप में, वह चाहे उत्पादिका रूप में हो चाहे पोषिका रूप में, वह चाहे शिक्षा में हो अथवा शास्त्रार्थ में, उनका स्थान अत्यन्त विशिष्ट तथा प्रतिष्ठापूर्ण रहा है। भारतीय महिलाओं ने हर क्षेत्र में और सभी कार्यों में पुरुषों के बराबर भागीदारी निभाई है। इन्हीं सब गुणों एवं विशेषताओं ने भारतीय जनमानस उसे (नारी) सृष्टि-निर्माता की अद्वितीय कृति मानते हुए गौरवपूर्ण एवं सम्मानीय स्थान पर आसीन करता रहा है। महिला को कोमलता, पवित्रता, मधुरता जैसे दिव्य गुणों की प्रतिमूर्ति मानते हुए उसे शक्ति स्वरूपा के रूप में भी हमारे धर्म-ग्रंथों और शास्त्रों में वर्णित और प्रतिष्ठित किया गया है।

इसके पश्चात् भी थैकरे ने हार नहीं मानी और उसकी सहायता के लिए नई सेना आ पहुँची। उसने दूसरी बार पुनः कित्तूर पर आक्रमण किया। रानी चेन्नमा ने दूसरी बार भी अंग्रेजी फौज को पराजित कर दिया। तीसरी बार पुनः बहुत बड़ी सेना के साथ अंग्रेजी फौज ने आक्रमण किया। रानी चेन्नमा और उनकी फौज ने तीसरी बार भी बड़े साहस के साथ मुकाबला किया; परन्तु सैनिकों की संख्या में कमी और साधनों के अभाव के कारण उनकी पराजय हुई। उन्हें बंदी बना लिया गया और बंदिनी के रूप में ही रानी चेन्नमा की मृत्यु हो गई। रानी चेन्नमा भले ही इस धरा से चली गई पर अपने पीछे शौर्य, साहस और देशभक्ति की ऐसी कहानी छोड़ गई, जिस पर आज भी हम भारतवंशी गर्व करते हैं। इसी प्रकार की स्वतन्त्रता आन्दोलन की अनेक वीरांगनाओं की अनगिनत कहानियाँ न केवल हम भारतीय लोगों के लिए अपितु सभी के लिए वीरता की प्रेरणा की मिसाल है। अपने एशोआराम की जिंदगी को त्यागकर देश की स्वतन्त्रता के लिए मर मिटने का जज्बा ही इन वीरांगनाओं को असाधारण बनाता है। अपने अदम्य साहस और सूझबूझ से इन वीरांगनाओं ने न केवर आजादी की मशाल को जलाए रखा; अपितु अंग्रेजी शासन की नींव को हिलाकर स्वतन्त्रता की वेदी पर हँसत-हँसते अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया। आज जब हम अपनी आजादी की स्वर्ण जयंती का अमृत महोत्सव मना रहे हैं, मेरा इन सभी वीरांगनाओं को शत-शत नमन। ❑

स्वतंत्रता आंदोलन और महिलाएँ

रचना सक्सेना
अंतरराष्ट्रीय बिजनेस पोस्ट ग्रेजुएट, सेल्स, मानव संसाधन तथा ट्रिनंग विभाग तथा स्किल डेवलपमेंट

संसार में परमात्मा ने स्त्री-शक्ति का मुकाबला करने वाली कोई दूसरी शक्ति उत्पन्न नहीं की। वास्तव में भारतीय इतिहास में गौरवपूर्ण अध्याय के निर्माण कार्य में जितना सहयोग स्त्री शक्ति ने दिया है उतना अभी तक किसी ने नहीं दिया। आदिकाल में भी जब-जब देवासुर-संग्राम छिड़ा राक्षसी शक्ति को नष्ट करने के लिए दैवी शक्ति का आश्रय लिया गया। भारत के स्वाधीनता संग्राम में आक्रमणकारियों के विरुद्ध सदैव स्त्री शक्ति अग्रणी रही। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अनेक दौर से गुजरा। 1857 के विद्रोह में विश्व के सबसे महान् व शक्तिशाली साम्राज्य को चुनौती दी गई। 1857 के इस विद्रोह में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, बेगम हज़रत महल जैसी वीरांगनाओं का योगदान विशेष उल्लेखनीय रहा। गांधी युग में राष्ट्रीय आन्दोलन जन आंदोलन में परिवर्तित हो गया। इस युग में सभी धर्मों व सम्प्रदायों के अनुयायियों तथा जनता के प्रत्येक वर्ग ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इस कार्य में महिलाएँ भी पीछे नहीं रही। आरंभ से लेकर अंत तक उन्होंने न केवल शांतिपूर्ण आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया अपितु वे क्रांतिकारी गतिविधियों में भी सक्रिय रहीं। गांधी जी भी राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी के पूर्ण पक्षधर थे। राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेकर महिलाओं ने न केवल ब्रिटिश शासन के विरुद्ध तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की बल्कि गिरफ्तार भी हुई। कुल मिलाकर महिलाओं के अंदर इस समय जो राष्ट्रचेतना पैदा हुई थी उसने यह सिद्ध कर दिया कि वे एक ऐसी राष्ट्रीय शक्ति हैं जो राष्ट्र की स्वाधीनता और अधिकारों के लिए सभी बंधनों से उन्मुक्त होकर लड़ सकती हैं। इस समय जिन स्त्रियों ने इतिहास में अपना नाम दर्ज कराया था उनमें एक पंक्ति उनकी भी थी जो गांधी जी की अहिंसावादी नीति का अनुसरण कर रही थीं और दूसरी पंक्ति उनकी थी जिन्होंने क्रांति का मार्ग चुना था। राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में अपने आप को महिलाओं ने विविध आयामों के साथ प्रस्तुत किया है।

भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन का इतिहास भारतीयों के संघर्ष की अद्‌भुत गाथा है। इस संघर्ष में पुरुषों और महिलाओं ने समान रूप से भाग लिया। घर का मोर्चा हो या राजनीति का रणक्षेत्र, महिलाओं ने जिस साहस, सहिष्णुता और वीरता से स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी भूमिका निभाई, वह इतिहास की धरोहर है। सन् 1857 का विद्रोह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का पहला ऐसा विस्फोट था, जिसकी नायक एक महिला थी, जिसने अद्भुत वीरता, पराक्रम और दिलेरी का परिचय दिया। उसके लिये स्वयं अंग्रेज शासक भी प्रशंसा किये बगैर नहीं रह सके। सर हयूरोज को झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के अद्भुत पराक्रम से चकित होकर कहना पड़ा कि "सैनिक विद्रोह के नेताओं में महारानी लक्ष्मीबाई सर्वाधिक बहादुर और सर्वश्रेष्ठ थीं।" रामगढ़ की रानी ने जहाँ रणक्षेत्र में लड़ते-लड़ते प्राण दे दिये वहीं बेगम हजरत महल अंग्रेजों के समक्ष आत्म समर्पण कर अपमानित होने के बजाए नेपाल की ओर चल पड़ी, जहाँ वनवास में उनकी मृत्यु हुई और जीनत महल को बर्मा में निर्वासित कैदी के रूप में जीवन व्यतीत करना पड़ा।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की 1885 में स्थापना ने महिलाओं को एक राजनीतिक मंच प्रदान किया। इसकी स्थापना के कुछ वर्षों बाद कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों में भारतीय महिलाएँ प्रतिनिधि के रूप में भाग लेने के लिए आने लगीं। 1890 के कलकत्ता अधिवेशन में स्वर्ण कुमारी देवी और श्रीमती कादम्बिनी गांगुली ने भाग लिया। श्रीमती गांगुली प्रथम महिला थीं जिन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस के मंच से अपना पहला भाषण दिया। यह सम्भवतः भारतीय महिलाओं के राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रवेश का शुभारम्भ था और इसके बाद तो मातृभूमि की खातिर राजनैतिक गतिविधियों में भाग लेने वाली महिलाओं की संख्या लगातार बढ़ती ही चली गयी। इन महिलाओं को उत्साहित कर एवं उन्हें

भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन का इतिहास भारतीयों के संघर्ष की अद्भुत गाथा है। इस संघर्ष में पुरुषों और महिलाओं ने समान रूप से भाग लिया। घर का मोर्चा हो या राजनीति का रणक्षेत्र, महिलाओं ने जिस साहस, सहिष्णुता और वीरता से स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी भूमिका निभाई, वह इतिहास की धरोहर है। सन् 1857 का विद्रोह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का पहला ऐसा विस्फोट था, जिसकी नायक एक महिला थी, जिसने अद्भुत वीरता, पराक्रम और दिलेरी का परिचय दिया। उसके लिये स्वयं अंग्रेज शासक भी प्रशंसा किये बगैर नहीं रह सके।

संगठित कर एक लक्ष्य महात्मा गांधी ने 1920 में असहयोग आन्दोलन चलाकर दिया। इससे महिलाओं को न केवल एक उद्देश्य मिला अपितु उन्हें एक नई दिशा भी मिली। जब 1930 में गांधी जी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाया, तो बड़ी संख्या में महिलाओं ने सत्याग्रह में भाग लेकर अपनी शक्ति का परिचय दिया। स्वदेशी प्रचार के पक्ष में वातावरण बनाने के लिए विदेशी वस्त्रों की होली जलाई जाने लगी। शराब की दुकानें धरना देकर बंद कराई जाने लगी। उसी तरह 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में तो हजारों की संख्या में महिलाएँ घरों से बाहर निकल आई। उन्होंने तन-मन से इस आन्दोलन में सहयोग दिया। संगठित रूप से कर्तव्य के प्रति समर्पित होकर और अनेक यातनाओं को सहते हुए उस समय राजनीतिक गतिविधियों की बागडोर सम्भाली जब अधिकांश राष्ट्रीय नेताओं को ब्रिटिश सरकार ने सींखचों में जकड़कर रखा था। उस समय राष्ट्रीय स्तर पर श्रीमती सरोजनी नायडू, अरूणा आसिफ अली, श्रीमती सुचेता कृपलानी, कमला देवी चटोपाध्याय, कस्तूरबा गांधी, विजय लक्ष्मी पंडित, मुत्तुलक्ष्मी रेड्डी, एनी बेसेंट, हन्सा मेहता तथा राजकुमारी अमृता कौर जैसी अनेक महिलाओं के योगदान को इतिहास कभी विस्मृत नहीं कर पायेगा।

नि:संदेह गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन से लेकर भारत की स्वाधीनता तक महिलाओं का राष्ट्रीय आंदोलन में जो योगदान था, वह भारतीय परिवेश में उनकी जागरूकता एवं परिवर्तनों को दर्शाता है। महिलाओं में सदियों से चली आ रही रूढ़िवादिता, अंधविश्वास तथा सामाजिक पिछड़ेपन की स्थिति को गांधीजी के दर्शन ने बदल दिया था। उनकी भीरूता का स्थान साहस ने ले लिया, उनके अंधविश्वास तथा रूढ़िवादिता के स्थान पर जागरूकता दिखाई देने लगी एवं उनमें राजनीति परिपक्वता का बोध होने लगा। कुल मिलाकर भारतीय महिलाओं के उत्थान का यह स्वर्णिम काल था।

1893 में एनी बेसेंट थियोसोफिकल सोसाइटी के आमंत्रण पर भारत पहुँची।'' एनी बेसेंट हिन्दू धर्म से बहुत प्रभावित थी। उन्होंने हिन्दू धर्म, दर्शन और संस्कृति के अध्ययन के साथ-साथ हिन्दू आचार-व्यवहार को भी आदर की दृष्टि से देखा। एनी बेसेंट ने भारतीयों को अपनी मान्यताओं के प्रति सम्मान करना सिखाया।

स्वतंत्रता आन्दोलन की क्रांतिकारी महिलाओं में एक और प्रमुख नाम उभर कर आता है - वह है 'दुर्गा भाभी' का। दुर्गा भाभी का जन्म 7 अक्टूबर , 1907 को इलाहबाद में हुआ था। दुर्गा भाभी भगवती बाबू जैसे महान क्रांतिकारी की पत्नी थी। उन्होंने अपने पति की क्रांतिकारी गतिविधियों में पूरा सहयोग दिया। वे दल के लिए पैसा इकट्ठा करती थी, क्रांति से संबन्धित परचे बाँटती थी, घर पर आए क्रांतिकारियों का स्वागत-सत्कार करती थी, उन्हें आश्रय देती थी। भगत सिंह द्वारा सांडर्स की हत्या करने पर वह भगत की पत्नी के रूप में उनके साथ कलकत्ता गई। भाभी ने इस जोखिम भरे रास्ते में आवश्यकता पड़ने पर उपयोग के लिए पिस्तौल भी छिपा रखी थी। 'भगवती बाबू अपनी पत्नी के इस साहसपूर्ण कार्य पर बहुत प्रसन्न हुए। भाभी ने गांधी जी से अन्य क्रांतिकारियों के साथ भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरु को छुड़ाने की शर्त वायसराय के सामने रखने के लिए कहा।' बम्बई में भाभी ने बाबा पृथ्वी सिंह आजाद के सहयोग से पुलिस कमिश्नर हेली को मारने की योजना बनाई लेकिन वह योजना सफल न हो सकी। सरला देवी जिन्होंने स्वदेशी आन्दोलन और बंग-भंग आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, उन्होंने भी अनेक क्रांतिकारी गतिविधियों में भाग लिया और 1905 में बंगाल व पंजाब के क्रांतिकारियों के बीच संपर्क सूत्र का महिलाओं ने देश के स्वतंत्रता समर की प्रत्येक रणनीति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्त्रियों के द्वारा अपने लिए मताधिकार की माँग को लेकर लड़ना हो या देश को स्वतंत्र कराने में अपना सर्वस्व न्योछावर करने की बात हो, स्त्रियों ने सभी क्षेत्रों में पूरी तत्परता के साथ काम किया। वैदिक काल के बाद भले ही नारी इस समय पुरुषों से अनेक क्षेत्रों में पीछे थी लेकिन इन्होंने पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अपने देश के स्वतंत्रता संघर्ष में भाग लिया। असंख्य महिलाओं के स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के कारण ही आजादी का यह महान आंदोलन सक्रिय बन पड़ा। स्त्रियों ने देश के प्रति प्रेम भावना का परिचय देते हुए व उसे स्वतंत्र कराने के लिए सभी तरीकों से अपना योगदान दिया। शांति प्रिय आन्दोलनों से लेकर क्रांतिकारी आन्दोलनों में स्त्रियों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। महिलाओं ने राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में अपने आप को विविध आयामों के साथ प्रस्तुत किया। ❑

क्रांतिकारी गतिविधियाँ और महिलाएँ

चन्द्र वीर सिंह भाटी
सहायक आचार्य,
राजनीति विज्ञान, राजकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
ओसियां, जोधपुर (राज.)

स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष जितना प्राचीन है उतना ही स्वतन्त्रता हेतु क्रांतिकारियों के प्रयत्नों का इतिहास है। स्वतन्त्रता हेतु क्रांतिकारियों के प्रयत्नों का इतिहास जितना प्राचीन है उतना ही प्राचीन इस क्रांतिकारी आन्दोलन में महिलाओं के योगदान का इतिहास है।

कित्तूर की रानी चेन्नमा के पति का निधन 1816 में व उनके पुत्र का देहावसान 1824 में हो गया। इस पर राज्य का दायित्व भार चेन्नमा के पास आ गया। चेन्नमा ने शिवलिंगप्पा को गोद लिया, जिसका विरोध अंग्रेजों ने किया। ब्रिटिश सेना ने 21 अक्टूबर 1824 को कित्तूर पर हमला कर दिया। परन्तु ब्रिटिश सेना को पराजित होना पड़ा और दो ब्रिटिश अधिकारियों वॉल्टर इलियट और स्टीवेन्सन को कित्तूर की सेना ने पकड़ लिया। इस पर ब्रिटिश ने बड़ी सेना के साथ पुनः हमला किया। इस बार रानी चेन्नमा को पराजित होना पड़ा। उन्हें बेलहोगल के किले में बंदी बना लिया गया, जहाँ 1829 को उनका निधन हो गया।

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के साहस और शौर्यपूर्ण संघर्ष में झलकारी बाई ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। झलकारी बाई का जन्म झांसी के समीप स्थित भोजला गाँव में 22 नवम्बर 1830 को एक दलित परिवार में हुआ। झलकारी बाई के साहस से प्रभावित हो रानी लक्ष्मीबाई ने उन्हें महिला सैन्य दस्ते में सम्मिलित कर लिया। 1857 की क्रांति में जनरल ह्यूज रोज ने झांसी पर आक्रमण किया। झांसी के किले का एक द्वार प्रमुख दूल्हे जू अंग्रेजों से मिल गया और किले का द्वार खोल दिया। रानी लक्ष्मीबाई अपने परामर्शदाताओं की सलाह मानते हुए

वेलू नचियार उन प्रथम महिला शासिकाओं में है जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध हथियार उठाये। वेलू नचियार का जन्म 1720 में तमिलनाडु के रामानाथपुरम् में हुआ था। उन्हें बचपन से ही शस्त्र और युद्ध विद्या की शिक्षा दी गयी। उनका विवाह मुथु वाडुगनाथ पेरियावउदय थेवर से हुआ जो शिवगंगाई के शासक थे। ब्रिटिश ने 1772 में शिवगंगाई पर आक्रमण कर शासक मुथु थेवर की हत्या कर दी। वेलू नचियार ने डिडिगुल की शरण ली और वहाँ से मारूथ भाईयों के साथ मिलकर पुनः राज्य प्राप्ति के लिए प्रयत्न आरंभ किये। उन्होंने भारतीय राजाओं का अंग्रेजों के विरुद्ध संगठन बनाने और सहयोग लेने का प्रयत्न आरंभ किया।

भाडेरी द्वार से कालपी की तरफ चली गयी ताकि भावी संघर्षों में ब्रिटिश सेना का रणनीतिपूर्वक सामना किया जा सके। इस स्थिति में झलकारी बाई ने अंग्रेजों को गुमराह करने की दृष्टि से स्वयं को लक्ष्मीबाई के रूप में पेश किया और युद्ध का नेतृत्व करने लगी। परन्तु दूल्हे जू ने उनकी सत्यता अंग्रेजों के सामने उजागर कर दी और अंग्रेजों ने उनको गिरफ्तार कर लिया। उनका आगामी जीवन विषम परिस्थितियों में बीता और संभवत: 1890 में उनका देहावसान हो गया।

वेलू नचियार उन प्रथम महिला शासिकाओं में है जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध हथियार उठाये। वेलू नचियार का जन्म 1720 में तमिलनाडु के रामानाथपुरम् में हुआ था। उन्हें बचपन से ही शस्त्र और युद्ध विद्या की शिक्षा दी गयी। उनका विवाह मुथु वाडुगनाथ पेरियावउदय थेवर से हुआ जो शिवगंगाई के शासक थे। ब्रिटिश सेना ने 1772 में शिवगंगाई पर आक्रमण कर शासक मुथु थेवर की हत्या कर दी। वेलू नचियार ने डिडिगुल की शरण ली और वहाँ से मारूथ भाईयों के साथ मिलकर पुन: राज्य प्राप्ति के लिए प्रयत्न आरंभ किये। उन्होंने भारतीय राजाओं का अंग्रेजों के विरुद्ध संगठन बनाने और सहयोग लेने का प्रयत्न आरंभ किया। मैसूर के शासक हैदर अली ने उनको सैनिक और हथियारों की सहायता प्रदान की। अंग्रेजों से युद्ध के पूर्व रानी को ज्ञात हुआ कि अंग्रेजों ने अपने हथियार एक स्थान पर छिपा कर रखे हैं। वेलू नचियार ने उनको नष्ट करने के लिए आत्मघाती हमले (मानव बम) के प्रयोग का निर्णय किया। इस प्रकार मानव बम की संकल्पना प्रथम बार वेलू नचियार ने दी थी। कुछ मान्यताओं के अनुसार वेलू नचियार की गोद ली हुई एक पुत्री कियूली ने स्वयं पर घी और तेल का लेपन कर आग लगा ली और ब्रिटिश हथियारों के संग्रहण स्थल पर कूद गयी जिससे बड़ी मात्रा में ब्रिटिश युद्ध सामग्री नष्ट हो गयी। तत्पश्चात् वेलू नचियार ने उन्होंने शिवगंगाई पर आक्रमण कर ब्रिटिश को परास्त कर भगा दिया। आगामी दस वर्षों तक उन्होंने शिव गंगाई पर शासन किया और उनकी 1796 में मृत्यु होने पर उनकी पुत्री वेलाची शासिका बनी।

पंजाब के शासक रणजीत सिंह की पत्नी रानी झिडन ने भी रणजीतसिंह की मृत्यु के बाद शासन संभाला। हालांकि अंग्रेजों ने उन्हें पराजित कर उनके क्षेत्र पर अधिकार कर लिया परन्तु वे आजीवन अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्षशील रहीं।

1857 की क्रांति में अवध में बेगम हरजतमहल ने क्रांति का बिगुल बजाया। उन्हीं के क्षेत्र में अजी जान बाई ने भी 1857 में क्रांति में अपना योगदान दिया। आजी जान बाई का जन्म 1832 में लखनऊ में हुआ, बाद में वे कानपुर आ गयी। कानपुर नाना साहेब की क्रांतिकारी गतिविधियों का केन्द्र था। उनका सम्पर्क क्रांति के सिपाहियों से हो गया, और उनसे प्रेरित होकर वे भी ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध 1857 की क्रांति में सहभागी बन गयी। वह पुरुषों के वेश में रहती और अपने पास पिस्टल रखती थी। क्रांति के दौरान क्रांतिकारी सैनिकों के मध्य सूचना आदान-प्रदान करने, घायल सैनिकों का उपचार करने और उनके भोजन पानी की व्यवस्था करने में अजीजान बाई और उनके महिला दस्ते ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। परन्तु अंतत: अजीजान बाई को अंग्रेजों की गोलियों का शिकार होना पड़ा और मातृभूमि की सेवा करते हुए उन्होंने प्राण त्याग दिए।

उदादेवी ने 1857 की क्रांति में

उदादेवी ने 1857 की क्रांति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। दलित समुदाय से सम्बन्ध रखने वाली उदा देवी ने ब्रिटिश शोषण का प्रतिकार करने के लिए बेगम हजरत महल से मिली और एक महिला बटालियन का गठन किया। 1857 के सिकंदरा बाग के युद्ध में उदा देवी ने 32 ब्रिटिश सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। 16 नवम्बर 1857 को उन्होंने युद्ध करते हुए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए।

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। दलित समुदाय से सम्बन्ध रखने वाली उदा देवी ने ब्रिटिश शोषण का प्रतिकार करने के लिए बेगम हजरत महल से मिली और एक महिला बटालियन का गठन किया। 1857 के सिकंदरा बाग के युद्ध में उदा देवी ने 32 ब्रिटिश सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। 16 नवम्बर 1857 को उन्होंने युद्ध करते हुए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए।

क्रांति की जो चिन्गारी अंग्रेजों के विरुद्ध 1857 की क्रांति और उससे भी पूर्व मातृशक्ति ने लगायी थी वह कालान्तर में भी ब्रिटिश शासन के विरुद्ध महिला शक्ति को राष्ट्र के प्रति सर्वस्व न्योछावर करने को प्रेरित करती रही।

ऐसी ही एक क्रांतिकारी महिला गुलाब कौर का जन्म 1890 में पंजाब के सगरूर जिले के बल्शीवाला गाँव में हुआ। विवाह के बाद गुलाब कौर फिलीपीस और फिर अमेरिका चली गयी। अमेरिका में वे गदर पार्टी के सम्पर्क में आयी और फिर गदर पार्टी की क्रांतिकारी गतिविधियों का कार्य भारत में बढ़ाने की दृष्टि से पुन: भारत लौट आयी और पत्रकार के रूप में कार्य आरंभ किया। पत्रकारिता के साथ-साथ वे गदर पार्टी के कार्यकर्ताओं के लिए हथियारों की आपूर्ति और क्रांतिकारी साहित्य के वितरण का कार्य भी करती थी। बाद में ब्रिटिश ने उन्हें देशद्रोह के आरोप में बंदी बना लिया और वर्षों तक अमानवीय यातनाएँ दी।

भारतीय स्वतन्त्रता संघर्ष में काकोरी कांड का प्रमुख स्थान है। इसी काकोरी कांड से जुड़ी महिला थी राजकुमारी गुप्ता। आरंभ में वे महात्मा गाँधी के विचारों से प्रभावित थी, परन्तु बाद में उनका झुकाव क्रांतिकारी गतिविधियों की तरफ हो गया। वे चन्द्रशेखर आजाद के साथ जुड़ गयी और क्रांतिकारियों को गुप्त संदेश और हथियार सामग्री पहुँचाने का कार्य करने लगी। काकोरी कांड में उन्होंने क्रांतिकारियों को हथियारों की आपूर्ति की। उन्हें अपनी गतिविधियों के कारण 1930, 1932 और 1942 में जेल जाना पड़ा।

हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी (HSRA) के सक्रिय सदस्य भगवती चरण बोहरा की पत्नी दुर्गावती देवी भी क्रांतिकारी गतिविधियों में निरंतर सक्रिय रही। वे HSRA के साथ नौजवान भारत सभा की सक्रिय सदस्य रही। उन्होंने शहीद करतार सिंह सराभा की जयन्ती का आयोजन लाहौर में करवाया। दुर्गा भाभी ने भगतसिंह द्वारा सांडर्स की हत्या करने के बाद उनको लाहौर से कोलकत्ता पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस कार्य को क्रियान्वित करने के लिए दुर्गा भाभी ने भगतसिंह की पत्नी की भूमिका निभाई। राजगुरु ने परिवार के सेवक का वेश धारण किया जबकि चन्द्रशेखर आजाद साधु के वेश में रेल में उनके साथ थे। भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु द्वारा 1929 में बम विस्फोट करने के बाद उन्हें मृत्युदंड दे दिया गया। इसके विरोध में दुर्गा भाभी ने पंजाब के पूर्व गवर्नर लार्ड हेले को मारने का निश्चय किया। परन्तु लार्ड हेले बच गया और दुर्गा भाभी को गिरफ्तार कर लिया गया। दुर्गा भाभी को

प्रफुल्ला नलिनी बहना

3 वर्ष की जेल की सजा हुई। 1998 में 92 वर्ष की उम्र में गाजियाबाद में उनका निधन हो गया।

क्रांतिकारी आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र रहे बंगाल से भी अनेक महिलाओं ने क्रांति का मार्ग चुना। सविनय अवज्ञा आन्दोलन के समय आंदोलनकारियों पर अंग्रेजों के अत्याचार बहुत ज्यादा बढ़ गये। क्रांतिकारी संगठन युगांतर की महिला शाखा 'धात्री शक्ति' की कार्यकर्ताओं का उन अत्याचारों से खून खौल उठा और उन्होंने इसका प्रतिशोध लेने का निर्णय किया। प्रफुल्ला नलिनी बहना, सुनीति चौधरी और शांति सुधा घोष ने जिला मजिस्ट्रेट चार्ल्स स्टीवेन्सन की हत्या करने का निर्णय किया क्योंकि उसने आन्दोलनकारियों पर भयंकर अत्याचार किये थे। इन तीनों बालिकाओं को मैनामती के जंगलों में गहन प्रशिक्षण दिया गया। 14 अक्टूबर 1931 को सुनीति चौधरी और शांति सुधा घोष महिलाओं के लिए स्वीमिंग पूल बनवाने की अनुसंशा प्राप्त करने के बहाने जिला मजिस्ट्रेट चार्ल्स स्टीवेन्सन से मिली और गोली मारकर उनकी हत्या कर दी। प्रफुल्ल को मुख्य षडयन्त्रकारी मानते हुए गिरफ्तार कर लिया गया और पाँच वर्ष पश्चात् चिकित्सा सुविधा के अभाव में उनका

शांति सुधा घोष

देहांत हो गया। सुनीति चौधरी और शांति सुधा घोष भी गिरफ्तार हुई। मजिस्ट्रेट की हत्या के समय सुनीति की उम्र मात्र 14 वर्ष थी। सुनीति को द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व हुए समझौते के अन्तर्गत 1939 में रिहा कर दिया गया। इसके बाद उन्होंने पढ़ाई पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और 1944 में उन्हें कोलकता मेडिकल कॉलेज में प्रवेश मिल गया। डॉक्टर बनने के बाद उनका विवाह प्रद्योत कुमार घोष से हुआ। सुनीति चौधरी ने अपना जीवन चिकित्सा और समाज सेवा में बिताया। 1988 में उनका देहांत हो गया।

बंगाल में बीनादास ने महिला क्रांतिकारी आन्दोलन का महत्त्वपूर्ण आधार तैयार किया। बीनादास बेनी माधवदास व सरलादास की पुत्री थी। उनके माता-पिता दोनों शिक्षाविद्, समाजसेवी व स्वतन्त्रता सेनानी थे। सरला देवी 'पुण्य आश्रम' नाम से महिला छात्रावास चलाती थी जिसका प्रयोग कई बार क्रांतिकारियों द्वारा होता था। माता-पिता से मिले संस्कारों के कारण बीनादास ने स्कूल में वाइसराय की पत्नी के आगमन

बीनादास

पर उनका स्वागत करने से मना कर दिया। कॉलेज अध्ययन के दौरान उन्होंने साइमन कमीशन का विरोध किया और कॉलेज को कई माँगें मानने के लिए बाध्य किया। इस कारण एक अंग्रेजी महिला को कॉलेज व नौकरी छोड़नी पड़ी। इनकी इस सफलता ने महिला क्रांतिकारी संगठन छात्र शक्ति की स्थापना का आधार तैयार किया। कोलकत्ता में कॉलेज के दीक्षांत समारोह में बीनादास ने समारोह के मुख्य अतिथि बंगाल गवर्नर स्टेनली जैक्सन की हत्या का फैसला किया। इस सम्बन्ध में युगांतर की महिला क्रांतिकारी कमलादास गुप्ता ने बीनादास को हथियार प्रदान किये। दीक्षांत समारोह के दौरान जब बीनादास ने गोलियाँ चलाना आरंभ किया तो विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर हसन सुहरावर्दी ने उनको रोक लिया और 8 गोलियाँ चलाने के उपरांत भी गवर्नर बच गया। बीनादास को गिरफ्तार कर लिया गया जबकि सुहरावर्दी को नाइटहुड की उपाधि दी गयी। बीनादास को 1940 में रिहा किया गया। परन्तु स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लेने के कारण पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें 1945 में वापस छोड़ा गया। स्वतन्त्रता के बाद उन्होंने युगांतर के क्रांतिकारी जतिनचन्द्र भौमिक से विवाह कर लिया। 1960 में उनको पद्मश्री से सम्मानित किया गया। 1986 में ऋषिकेश में उनका देहांत हो गया। क्रांतिकारी गतिविधियों के कारण बीनादास की स्नातक डिग्री अंग्रेजी शासन ने रोक ली थी, उसको 2012 में कोलकता विश्वविद्यालय ने प्रदान किया।

कल्पनादत्ता व प्रीतिलता वाडेकर बंगाल के क्रांतिकारी संगठन इंडियन रिपब्लिकन आर्मी (IRA) से जुड़ी थी। कल्पना दत्ता छात्री संघ के सम्पर्क में अपने कॉलेज शिक्षा के दौरानी आयी। छात्री संघ के माध्यम से ही वे अन्य महिला क्रांतिकारियों बीनादास और प्रीतिलता वाडेकर के सम्पर्क में आयी। 1931 में कल्पनादत्ता सूर्यसेन के इंडियन

कल्पनादत्ता

रिपब्लिकन आर्मी (IRA) से जुड़ी। IRA में वे बम बनाने व क्रांतिकारियों के मध्य सूचना पहुँचाने का काम करती थी। 1931 में कल्पनादत्ता और प्रीतिलता वाडेकर को चिटगौंग के एक यूरोपीयन क्लब पर हमला करने का काम सौपा गया। यूरोपीयन क्लब पर हमला करने से एक सप्ताह पूर्व कल्पना दत्ता क्षेत्र की रेकी करने गयी और इसी दौरान उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। कुछ समय बाद उन्हें जमानत पर रिहा किया गया। इसके बाद वे गुप्त रूप से क्रांतिकारियों को सहयोग करती रही। 1933 में उन्हें पुनः गिरफ्तार कर लिया गया और फिर 1939 में रिहा किया गया। प्रीतिलता वाडेकर को 1932 में यूरोपीयन क्लब पर IRA द्वारा किये जा रहे हमले के दस्ते में शामिल किया गया। प्रीतिलता ने पंजाबी पुरुष का वेश धारण कर हमले में भाग लिया। इस हमले में वे घायल हो गयी। ब्रिटिश सैनिकों ने उन्हें घेर लिया। इस स्थिति में प्रीतिलता ने साइनाइड खाकर अपना जीवन त्याग दिया।

स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष में अनेक ज्ञात-अज्ञात महिला क्रांतिकारियों ने अपने जीवन की आहूति दी। राष्ट्र सदा उनके बलिदान के लिए ऋणी रहेगा। ❑

Women in Bharatiya struggle for Independence

Dr. TS Girishkumar
Professor of Philosophy (Rtd) MSU Baroda

The very perception of attempting to perceive women in separation to make a juxtaposition with man creates a contradiction between the two, typically in the line of contradiction celebrated in the Dialectic Materialism of Marx which is presumed a philosophy. The ideal Bharatiya situation had ever been different in our perception of the female. It is explicit not only throughout the Vedopanishadic knowledge tradition, but also for the common people. It was present in an iconic pattern through worshipping "Ardhanarishwara" on a popular platform. Such iconic representation varies from Kamasutra depiction on the temple walls to battles and even to Khshirasagar Manthan. The point simply is, that Bharat had never viewed women as 'the other' from men, and this remained to the one cardinal point constantly conscious in all Bharatiya endeavors of anything.

Women in the European knowledge tradition

Let me start with the postulate that European knowledge tradition has its roots in Greek philosophical tradition, though the Greek knowledge tradition died young with the Roman conquest to start a Greek decadence which was completed through the invasion of Christianity. The European thinkers had to bridge a gap of two thousand plus years of 'darkness' with the theological overtone through Papacy, and they traced it back to the Greeks to establish some kind of a beginning to both pre-Socratic thinkers and the Socrates – Plato – Aristotle trio to find ample directions. Both Christianity and medieval so- called thoughts do carry this inescapable influence of the Greeks.

Subsequently, when Christians felt the need of creating some theological structure,

they did disguise it as some kind of philosophy through Augustine, Aquinas and Anslem who borrowed heavily from Plato through Aristotle. Their approach to women also originated from Plato's ladder of beings, where the 'Idea of Good' was atop, then Demiurge, Gods and Goddesses, Heroes, Men, and women come only after men. The so-called first democracy of the Europeans, the Greek democracy did not treat women equal to men as it is evident from their voting patterns. Men could cast their votes for electing leaders, but women and slaves did not have voting rights. Slaves were prisoners of war and they came from other city states or so, but what about Greek women who mothered Greek citizens for future?

Seeing woman as an inferior to men begins with Greece went into Christianity and eventually to Islam in most heinous manner. It is from them, that the modern age keeps seeing feministic thoughts and some such movements, which are indeed, required for Europeans, but the same when imitated in Bharat, at once becomes anachronistic as well. In this context Bharat had ever been another paradigm, logic, another perception and indeed another Sanskriti.

Women in Bharat

Women in Bharat had ever been existing with a much different status as compared with women elsewhere in the world, is a fact which should be known to all. Indeed, this status had suffered much in later times, beginning with the invasions of various types of Muslims. As the Muslims did not prefer married women for abduction, the practice of child marriages slowly set in. As the modesty of women got abused outside the homes by the Muslims the Purdah system slowly entered, and became hazardous; our women were not sent out for education and so on. Sati is another daring phenomenon women of Bharat to save themselves from becoming sex slaves of the invaders, a thing that can't be thought of without much pain. Our own Sanskriti, our own houses and even our ancestors lived under coercion and compulsions, but they saved and protected the Hindu Dharma for all of us to remain proud of it today.

> **The role of Bharatiya women towards Bharatiya struggle for independence shall be a saga in itself. Perhaps there may be no instance of sacrifice from any man in this context, without a greater sacrifice of women in some form or other associated with it. This could be only a mother who willingly encouraged her son to struggle for independence of Bharat against the encroached oppressors; this could be a wife who was much more than willing to risk her 'Mangalya-sutra'. This could be a sister who might.**

Women as the prime mover

If one is scrupulous in perception, one shall at once realise that Bharatiya homes are not women centered, but mother centered. No demonstration is needed, our own lives are self-luminous. The moment my wife gives birth to my child; she becomes the mother, and shall start behaving like a mother even to the husband. Yet another implicit fact is that, such mothers, may it be wife, sister, daughter or mother herself, become great motivating factor, great moving power in the lives of other family members. The instance of the mother of Chhatrapati Shivaji Maharaj is just one among many. In fact, families of Bharat are kept intact by the mothers, and they actually imparts Bharatiya Sanskriti to next generation, so on and so forth. Examples and instances are many, our personal experiences themselves are demonstrative, and our first lesson starts from our mothers. Thus, it is natural that we address our nation as mother.

Women in freedom struggle of Bharat

The role of Bharatiya women towards Bharatiya struggle for independence shall be a saga in itself. Perhaps there may be no instance of sacrifice from any man in this context, without a greater sacrifice of women in some form or other associated with it. This could be only a

mother who willingly encouraged her son to struggle for independence of Bharat against the encroached oppressors; this could be a wife who was much more than will- ing to risk her 'Mangalyasutra'. This could be a sister who might miss her brother in next 'Rakshabandhan', and this also could be a daughter who might miss the tender care, love and affection of her father for the Nation.

Let us also recall the beginning of our fights for freedom against the invasions of alien aggressors, that dates back into much in the past. Alexander, son of Phillip of Macedonia is known to most of us, but the unscrupulous destruction of the Arab monster Qasim is more to be remembered. Alexander was a Greek, a Hellenist, the student of Aristotle and had nobility in him. Qasim, the later aggressor had nothing of these, he was just a desert viper. In his zealous and unscrupulous ambition to bring everyone to the right path through Islamisation, he had destroyed the civilisation of Sindh. Those who could flee from this unscrupulous monster escaped to nearby provinces like Punjab that are today known as Sindhi Punjabis – and the rest who could not flee had to choose between Islam and death. Further, those Sindhi Punjabis had to flee once again with the partition of Bharat, making a society undergo exodus twice in history, all for the sake of Hindu Dharma.

How many women unknown hitherto must have sacrificed their all – no one shall ever know. The Sikhs gave them strength, but with the partition of Bharat, everything changed again. From that time onwards, Bharat continued to fight against varying types of invaders and invasions. And this fight is still an ongoing process, more so with the enemies within.

The sacrifices of women during the Muslim domination in many parts of Bharat are also the contribution to the Swabhimana and Swatantrata of Bharat, both implicitly and explicitly. We all know about the great mother of Chhatrapati Shivaji Maharaj – who is a paradigm instance. One shall find it difficult to discuss the role of women in Bharat towards Bharatiya independence because the list of the 1947 struggle alone without including the first struggle of independence shall be so long that it is impossible to make an inventory.

How can anyone even think of listing those great mothers, sisters and daughters of Bharat? Perhaps they all were Gandharis and Kuntis when it came to action! We do not know, and we have no way of knowing at all. Therefore, I wouldn't dare listing names, because that would be injustice to those whose names got missed out. Madam Cama? Rani Chennamma? Natchiyar? We know the Rani of Jhansi and the Holkars, but we do not know many others from all over Bharat.

Our history that was created by the Europeans, (they were either ignorant or deliberate liars with nefarious intentions) who trained subservient Bharatiyas, (mostly out of ignorance and fear of their masters) Communists who do not believe in Sanskriti, Nationhood and Dharma, who are otherwise frustrated in not being able to be happy and comfortable (they were both deliberate and fetishized) and the neo-commu- nists, liberals, urban Naxals who are anarchists - all were at mak- ing history of Bharat in manners of their own, really created big clouds of confusions that still keeps us away from the truth and realities.

The AIML – All India Muslim League explicitly stood for two Nation theory and implicitly stood for a Dar-Ul-Islam. After partition, the AIML changed the attire to become IUML– Indian Union Muslim League but continued to be the same one. They followed what Jinnah initially wished for, to stay in Bharat and get the maximum benefits including reservations until there is some favorable occasion. With the support of the left liberals and others, they included many two nation theory supporters as freedom fighters for Bharat. For instance Tippu is pictured as freedom fighter. Let me conclude with one question –are there any legitimate women freedom fighters among the Muslims? ❑

Women associated with Arya Samaj were galvanising support among women. SmtPurani, a prominent Arya Samaji in Hissar, travelled across various districts for the cause of Swadeshi. She advocated that women should bring up their sons to participate in trade, manufacture and sale of swadeshi rather than looking for government jobs. In Lahore, women organized a Ladies section at the Industrial and Agricultural Exhibition of 1909.

Spirit of Swadeshi and Swaraj Empowered by Women

Prof. Geeta Bhatt
Director,
Non -Collegiate Women's Education Board,
University of Delhi

Swaraj and Swadeshi were the two words that germinated the fire of an ideological context that gave rise to cultural nationalism and scripted the indigenous movement for independence from the British. There were many religious-reformist initiatives and organisations in the latter half of the nineteenth century that brought forth the desire for self-rule. Dayanand Saraswati gave the call for Swaraj and India for Indians and the same was echoed by Bal Gangadhar Tilak in 1896 when he said that Swaraj was his birth right. In the Calcutta session of the Congress in 1906, under the leadership of Dadabhai Naoroji, 'Swaraj' was adopted as the goal of the Indian people. Swaraj streaked with Swadharma and Swabhasa commenced the Swadeshi movement which was called for shunning of foreign goods and supporting the production and patronization of home-built products.

The reformist organisations like Hindu Mela by Rajnarain Bose and Nabagopal Mitra, Mitra Mela later called Abhinav Bharat by V.D Savarkar, Arya Mahila Samaj by Pandita Rama Bai and many more developed an environment which gave women the space to participate in the national movement of the country. Some of the well-known educationists and social reformers, Shevantibai Trimbak, Shantabai Nikambe, Kashibai Kanitkar, and Manockjee Cursetjee encouraged women to get educated and partic ipate in the public life of the nation. Swarnakumari Devi, the elder sister of Rabindranath Thakur became the first woman editor of the Bengali journal 'Bharati' and she started one of the earliest women associations in the country during the late nineteenth century, called 'Sakhi Samiti' with the motive to enlighten women regarding the welfare of the coun- try. She was also among the ten women who attended the session of the Indian National Congress in 1889.

Sister Nivedita who after her interaction with Swami Vivekananda came to India in 1898 and extensively worked among women. She wrote in a

let- ter "Nothing is so extraordinary in India as the combination of intense religious conviction with marvellous political peacefulness, when one takes a large enough view of the situation to get facts at a true, focus. The only thing that has never been written is good history, at least about India that I do understand". She was witness to the growing discontentment among the countrymen against the colonial rule. The Swadeshi movement spread like a wildfire with the announcement of the British to partition Bengal in 1905 on religious lines to divert the attention of the people, among who anti British sentiment was on a rise.

George Curzon, the Viceroy of British India at the time of partition of Bengal, further infuriated the unrest by his statements. His convocation speech at the Calcutta University on February 11, 1905 where he said that Indians were not fit to take high offices because of their up bringing and the culture was condemned by the nationalists. Sister Nivedita was present in the University Hall during the convocation and took the lead in condemning Curzon's statement. When Swami Vivekananda's brother Bhupendranath Dutt, editor of the newspaper 'Yugantar' was arrested on the charges of sedition and convicted for one-year imprison- ment, Sister Nivedita went to the court to stand as surety for him. Two hundred women signed a let- ter of honour for Dutta in a meeting organised to render their support.

A large number of women gave up using imported cloth and smashed their foreign bangles. Women started donating their jewellery and, in the villages, handful of grain was being put away every day for the purpose of national cause. During the Provincial Conference of 1906 Smt. Sarojini Bose, wife of Tara Prasanna Bose, pledged that she would not wear gold bangles till the British government circular prohibiting the use of the clarion call "BandeMatram", was taken back. One Mrs. J.k. Gangauli, gave her bracelet as a contribution towards paying off the fine of Shri Durga Mohan Sen, who was con- victed for seditious activities by the British.

Women associated with Arya Samaj were galvanising support among women. SmtPurani, a prominent Arya Samaji in Hissar, travelled across various districts for the cause of Swadeshi. She advocated that women should bring up their sons to participate in trade, manufacture and sale of swadeshi rather than looking for government jobs. In Lahore, women organized a Ladies section at the Industrial and Agricultural Exhibition of 1909. Sushila Devi of Sialkot, delivered a series of lectures in which she attacked the government and exhorted the women to rise to the occasion. Har Devi who was wife of a Barrister in Lahore, the editor of the Hindi Magazine 'The Bharat Bhagini', arranged meetings and collected funds for the purpose of assisting nationalists under trial. Sarala Devi Chaudhurani, niece of Rabindranath Thakur, was greatly influenced by the Ganpati festival organised by Bal Gangadhar Tilak, physical and military training by Damodar and Balkrishna Chapekar during her stay in the western part of the country. On her return to Calcutta,she formed akharas and byayam samitis for physical training of young men which also served as linkages with revolutionaries. She also opened a shop called 'Lakshmi Bhandar' which stocked Swadeshi material and articles to cater to the needs of women.

Women in villages and cities were getting mobilised by the spirit of Swadeshi and Swaraj. In one instance, five hundred women met at the Jenokand village in Murshidabad district, to protest against the British government's decision to divide Bengal and urged the people to use country made goods. The growing resistance against the British rule among the women prompted the government to prohibit the recording of swadeshi songs on gramophone discs and their play in the theatre halls. British Journalist Valentine Chirol wrote in 'India Unrest' - "The revolt seems to have obtained a firm hold of the Zenana and the Hindu woman behind the purdah often exercised a greater influence up' on her husband and her sons than the English woman who moves freely about the world. In Bengal even small boys of so tender an age still have the run of Zenana, they have been taught the whole pattern of sedition and go about from house to house dressed up as little Sanyasis in little yellow robes preaching hatred of the English." ❑

Plural identities in the Indian National Movement of Freedom with Special Reference to Women Revolutionists of Assam

Dr. Sindhu Poudyal
Assistant Professor
Department of Philosophy
Central University, Tripura

There will be no dispute regarding the fact that our Indian movement for independence was a collective effort and chain of events- some tied together within historiography and some are still scattered and waiting for the development of narrative alongside digging out facts related to the same. However, we all are aware that the aim of all these scattered events in the form of agitations, protests, and rebellions lasted more than ten decades and ultimately aimed towards the uprooting of the British-ruled colonial domination in India which existed for almost five centuries. One of the crucial nature of the Indian national movement was that it was scattered and unorganized unlike the rule of the British Government yet possessing one single goal and because of this, it became difficult for the Britishers to comprehend the whole scenario in one shot for which they gradually lost the battle against Indian people who are rooted in the tradition in which we are even today. India as a state is vast, so also the cultures and ethnicities in it. Irrespective of the pluralities, every part of India contributed its bit to the achievement of an independent India. In this paper, I shall be highlighting the role of the Indian woman in the Indian national movement for independence and this paper specifically focus on the state of Assam.

Like other parts of India, Assam too had played a pivotal role in the Indian independence movement. Assam can be seen and termed as a mini India, not because of only the geographical difference in terms of spatiality, but rather being a land of amalgamation of multiple ethnic tribes and religions and all of these have contributed their share to the development of Assam along with the participation in the struggle for independence. According to the prevalent data, there were at least three revolts against the existing colonial rulers. The first such revolt was started in the year 1828 to throw away British rule and make Gomdhar Kuwar the Ahom king then ruled by the British. The second such was to establish the Ahom kingdom under the leadership of the relative of former Ahom King Jogeshwar Singha for Gadhadhar Singh as the king. The third such attempt was initiated in the year 1830 under the leadership of Dhanjoy Borgohain, Jewram Dulia Baruah, Peali Borphukan, and others for the establishment and supremacy of the Ahom kingdom over and above the British Raj. But unfortunately, all these three revolts were lost by the initiators, and their families- especially wives and children were also arrested and eventually killed brutally by the British government. When we mention the names of the sacrifices and contributions made by the great leaders of that era we should also not forget the sacrifice made by the families of these great revolutionaries. These

three struggles were initiated much before the all-India freedom struggle which was listed to start from 1857 onwards. Hence, this can be taken as a clue that when we look into the greater picture of India and attempt to do the historiography of the events in a linear way which we intended to do during post-colonial India by the historians was not comprehensive indeed. However, this article doesn't intend to instigate or trigger any specific issue. The intention of bringing forth this point has been just to justify the fact that, the Indian struggle for independence and more specifically when we utter the phrase - Indian freedom struggle' we have to first understand that, it neither started from only one specific place and nor began only in one single day. It is a cluster of events taking place simultaneously across India in some form or the other (even though we might have missed many more than we could historicize. In the following passages, I shall very briefly analyze the role of those women freedom fighters whose contribution I believe needs to be known by the whole country and the world not only today but also in the future.

Indian freedom fight movement to name, a few have been Kiran Bala Bora baideuiii, Bidyut Prova Devi, Nalini Bala Devi, Snehalata Bhattacharya, Dharma Devi, Kanaklata Barua, Chandaprova Saikiani, Sarala Das, Kiran Bala Borkakati, Kiranmayi Agarwala, Bhadreshwari Devi, Lilabati Kakati, Sashiprova Chaliha, Swarnalata Barua, Hemoprova Das, Shashiprova Das, Ratna Bezbarua, Guneshwari Devi, Sundari kakati, Ratneshwari Phukanani, Guneshwari Majumdar, Khagendrapriya Barua, Bhanumati Talukdar, Hemanta Kumari Devi, Debeshwari Hazarika are prominent ones who actively took part in Non-Co-operation movement of 1921 which was actively initiated by M. K Gandhi. If we analyze the ethnic identities of all these women who took part in some way or the other in India's struggle for Independence, then only we can very well appreciate the plural identities, diversified social strata of society as well as of different ages from teen to adult - playing pivotal roles even with the women revolutionists during that era.

The role of Chandraprabha Saikiani baideu in the freedom movement can be seen as one strong Pillar who initiated the education and employment for the woman. Being a single mother and with all the odds of society, she fought for the rights of women at such an age where women were not allowed to have an education. Her role could be seen mainly in revolutionizing the prevalent practices along with marshaling the women of Assam to join the non-cooperation movement in the year 1921.

The role of Chandraprabha Saikiani baideu in the freedom movement can be seen as one strong Pillar who initiated the education and employment for the woman. Being a single mother and with all the odds of society, she fought for the rights of women at such an age where women were not allowed to have an education. Her role could be seen mainly in revolutionizing the prevalent practices along with marshaling the women of Assam to join the non-cooperation movement in the year 1921. Nalinibala Devi, Guneswari Devi, and Hemanta Kumari Devi's major contributions lie in the roles they played in the non-cooperation movement. This trio together opened a school to disseminate the Swadeshi movement in Assam. Nalinibala Devi was one finest poet India could produce during that age who wrote several Assames poems which are high in spirit and filled with futuristic dreams of free land. This paper will be incomplete without a mention of the sacrifice made by Birbala Kanaklata Barua about whom there has been a buzz in late antiquity. I believe, her role in the freedom struggle needs to be mentioned without any second observation because she was one among very few women teenage freedom fighters from Assam in India who also attained martyrdom in her teens? ❑

The revolt of 1857 was an integral mutiny of the 34th Native Infantry Chittagong under the leadership of Narendrajit Singh as they were all fighting against the British rule. In the psyche of these revolutionary soldiers there was no disparity in the name of caste, creed or religion. They were bound together by a feeling of true nationalism and intense anti-colonial sentiments. In January, 1858 fought in Cachar and lost the battle, the prince was arrested by the Manipur army. Thus his revolt in Cachar was considered the eastern arm of the Revolt of 1857.

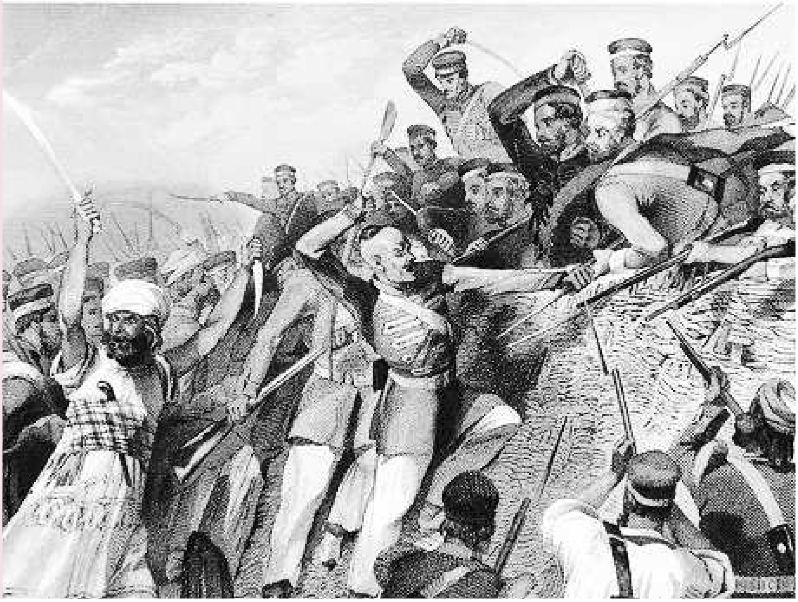

Literature and Tales of Freedom Struggle with Special Reference to North-East India

Dr. Aparna Das
Assistant Professor
Department of English
Maharaja Bir Bikram College, Agartala
(Tripura)

Indian freedom movement was a battle of ideas that gave it a sense of modernity and also the quest for its own civilisational strength. Literature has played an important role in history. It has been used and is still being used as a tool of propaganda. The North-east India participation in India's freedom struggle is a tale of valour and courage which started in the 19th century itself with a mass peasant uprising against the British and resistance by the hill people. The North-east region of India remained mostly independent of the control of the Delhi Sultanate or any other external power but was troubled with the rule of the East India Company and was deeply involved in the discontent itself that led to the uprising. It was also involved with the 1857 movement.

There is abundant literature for the North-east regarding the participation in events of 1857 and later days which help us to reconstruct the role played by this region. This paper is going to highlight on the participation of North-east in freedom struggle through literature.

The early history of Tripura is shrouded in myths and legends. According to the legends, the state of Tripura was founded by Druhyu, a son of emperor Yayati, who belonged to the lunar dynasty. Among the nineteen tribes, the Tripuris numerically constitute the largest tribe of Tripura. According to Roy Choudhury, "The Tripuris belong to Bodo group of Indo-Mongoloid people. The Bodos, spread over the whole of Brahmaputra valley and North Bengal as well as east Bengal forming a solid block in Northeastern India. The Bodos were the most important Indo-Mongoloid people in eastern India and they form the main basis of the present day population of these tracts." (77) During the first half of the nineteenth century, monarchy began to favour the British Empire. The rulers had assisted the British in 1824 during their campaign against Burma. The British were very concerned with the frequent revolts by the tribal population and wanted to take measures to prevent them as they realised that the monarch was incapable of doing the same. The King became anxious to please the British hence he made attempts to improve the revenue collection in his state. For this purpose, he appointed Balaram Hazari as the Dewan who was to look after the revenue collection

and with him he appointed Bipin Bihari Goswami, to take care of the state affairs. The Dewan was very strict and harsh in his actions while collecting the revenue. He began to extract undue taxes from the people and this made people rebel against the oppressive collector which resulted in a revolt in 1857. The state affairs were also in a mess as Dewan had got full support of Goswami in allowing him to collect undue taxes from people of Reang, who had already faced two consecutive droughts in their region. The revolt was supported by the other tribal people and made the Kukis also to revolt in 1860. However, the revolts by the tribes were suppressed and Balaram Hazari was removed from his duties. The revolt by the tribes coincided with the uprising of the 1857 which had begun to mobilise the anti- Brirtish sentiments in the North.

The mutiny of 1857 had stunned the British Indiam Empire and had begun to show impact on Cachar under the leadership of Narendrajit Singh, a Manipuri prince who was son of Maharaja Chourjit Singh. During the revolt, the prince was able to provide strong leadership to the mutineers. Narendrajit singh had not forgotten the unfair deeds of the east India Company during the reign of his father. The prince was harbouring anti- British sentiments and felt that participating in the mutiny of 1857 will help him to take revenge from the British, thus he joined the war of independence. The soldiers of the 34th Native Infantry in Chittagong fought the Battle at Latoo on 8 December, 1857. The soldiers killed Major Byng who was fighting for the British. The prince joined the mutineers on 20 December 1857 when they reached Cachar. The British Government was given full support by King Ishanchandra who prohibited the soldiers from entering his territory. The infantry and the prince was proving to be dangerous for the British, Robert Steward employed preventative forces at Cachar when his deputy Lt. Ross informed him that the mutineers were split into groups and were trying to gain access into Cachar and Badarpur. The British toughened their measures in Panchgram.

The revolt of 1857 was an integral mutiny of the 34th Native Infantry Chittagong under the leadership of Narendrajit Singh as they were all fighting against the British rule. In the psyche of these revolutionary soldiers there was no disparity in the name of caste, creed or religion. They were bound together by a feeling of true nationalism and intense anti-colonial sentiments. In January, 1858 fought in Cachar and lost the battle, the prince was arrested by the Manipur army. Thus his revolt in Cachar was considered the eastern arm of the Revolt of 1857.

During 1850s, Narendrajit Singh who had managed to escape after the Cachar attacked reorganised a battle force with anti-British population of Cachar and jail authorities to help the arrested prince to be rescued. The six princes managed to escape in January 1958 though they were unable to join the war of Binnakandy. Urgent hunt was ordered by the Superintendent but the efforts were futile. The jail staff was held responsible for this mishap. A reward of rupees hundred was declared by the Superintendent. Inspite of the reward, no one in the region gave any information about the six Manipuri princes or Narendrajit Singh. This made the superintendent realise the support which was there among the people and decided to employ harsher measures to control the mutineers. These instances give a clear indication that in Cachar the uprising had clearly turned into a revolt with the presence of Narendrajit Singh who had full support of the people of the region. Later on, Narendrajit Singh was arrested by the Manipur army but Chandrakirti Singh wanted him to be released as he knew that the prince was not participating in the revolt in order to get access to the throne. The prince had fought a war for the independence of Cachar from the British rule. People of Cachar gave full support to the uprising by the prince and his army and turned it into a revolt of such an immense scale. The revolt under Narendrajit Singh led to awakening the people towards a common aim of overthrowing the British and attaining the freedom of North eastern India from their oppressive rule. The revolt helped in spreading the feeling of Nationalism in the region of Cachar. It was an independent principality till 1820s and was not fully aware of the binding status of a state. R. Stewart, has been quoted from one of his letters about his views on the strength of the mutineers, When the mutineers of the 34th National Infantry entered Cachar and their strength and intentions were unknown, the agitation amongst the Munnipoorie population was extreme, and the station was threatened each day with attack. ❑

शिक्षा : संत परंपरा और उसकी प्रासंगिकता

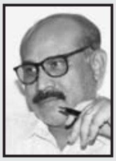

प्रो. सतीश कुमार

राजनीति विज्ञान संकाय,
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय
मुक्त विश्वविद्यालय

शिक्षा की जब भी बात आती है तब पूरी दुनिया पश्चिम की ओर देखती है, विशेषकर अमेरिका की ओर शिक्षा का आधुनिक अर्थ व्यवसाय और भौतिकता से जोड़ दिया गया। संस्थाओं की बहुमंजिला बिल्डिंग और आधुनिक मशीनें व्यवस्था की अंग बन गई। ज्ञान का हथियार बना लिया गया। अर्थात् उसका विस्तार स्वार्थ हिंसा और अपने ढंग से अपने हित के अनुरूप किया गया। यही कारण था कि आधुनिक पश्चिमी शिक्षा व्यवस्था ने इंसानियत और मानवता की हत्या कर दी। भारतीय शिक्षा व्यवस्था को कपोल कल्पित और मनगंढ़त बना दिया। यह आलेख दो खंडों में है। पहला इस बात की व्याख्या कि कैसे भारत की प्राचीन संत परंपरा में शिक्षा की मजबूत नींव न केवल वैज्ञानिक और तार्किक है बल्कि एक बेहतर दुनिया को गढ़ने का सबसे सशक्त मार्ग भी तैयार करता है। दूसरा खण्ड है कि आज न केवल भारत के लिए बल्कि दुनिया को आर्थिक तबाही, जातीय हिंसा और संप्रदायिक बंटवारे से बचाने के लिए पुन: संत परंपरा की मजबूत इकाई बनाने की जरूरत है।

जार्ज बर्नाडशा, प्रमुख पश्चिमी साहित्यकार ने कहा था, कि भारतीय जीवन शैली प्राकृतिक मास्क से ढंक कर रखते हैं। भारत के चेहरे पर मौजूद हल्के निशान रचयिता के हाथों के निशान हैं। अर्थात् भारत की भूमि से ज्ञान का सागर बहता है। प्राचीन पाँच महत्त्वपूर्ण सभ्यताओं में भी भारत की पहचान ज्ञान और प्रज्ञा के कारण बनती है। इसकी प्रतिष्ठा पूरी दनिया में थी।

भारत की संत-परंपरा की शिक्षा व्यवस्था कई बार तोड़ी गई, जलाई गई। मुगल आक्रमणकारियों से लेकर ब्रिटिश तंत्र ने उसे जलाकर राख में बदलने की कोशिश की। लेकिन उसकी जड़ें बनियान वृक्ष की तरह बेहद गहरी थी। टूटने और जलने के बाद भी उसकी फुनगियों में आन बनी रही। कबीर से लेकर गांधी तक में इसकी झलकियाँ देखी जा सकती हैं। तमाम विरोधों और अड़चन के बाद भारत की संत परंपरा की नई शुरूआत 2020 शिक्षा नीति के रूप में पूरी दुनिया के सामने है। यह सच है कि हिमालय पर्वत की ऊँचाई बहुत दूर है। लेकिन जिस शिक्षा व्यवस्था ने हिमालय पर्वत की परिभाषा की स्थापना की हो उसके लिए उस ऊँचाई तक पहुँचना मुश्किल नहीं, केवल संयम और अनुशासन की जरूरत है। प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था का अर्थ और मतलब भी यही है।

प्राचीन भारतीय सभ्यता विश्व की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सभ्यताओं में से एक है। भारत की गौरवशाली सांस्कृतिक विरासत एवं प्रगति का मूल आधार युगीन शिक्षा ही थी। प्राचीन भारत में शिक्षा को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया गया जिसका मूल उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास था। भौतिक और आध्यात्मिक मूल्य तथा विभिन्न उत्तरदायित्वों को विधिवत निर्वाह के लिए शिक्षा की आवश्यकता को सदा स्वीकार किया गया।

बौद्धिक युग से ही इसे प्रकाश का स्रोत माना गया जो मानवजीवन के विभिन्न लोगों को आलोकिक करते हुए उसे सही दिशा-निर्देश देता है। प्राचीन भारतीय शिक्षा ने अपने देश में ही नहीं, समूचे विश्व में ऐसा उच्चकोटि का आदर्श स्थापित किया, जिससे न केवल व्यक्ति का व्यक्तित्व ही निखरा बल्कि सम्पूर्ण देश और समाज का नाम ऊँचा हुआ। प्राचीन शिक्षा पद्धति ने समूचे संसार में अपना डंका बजाया।

ऋग्वैदिक काल में शिक्षा का मुख्य पाठ्यक्रम वैदिक साहित्य का अध्ययन ही था। पवित्र वैदिक ऋचाओं के अतिरिक्त इतिहास, पुराण गाथायें एवं खगोल विद्या, ज्यामिति, छन्दशास्त्र आदि भी अध्ययन के विषय थे। शिक्षा का मूल उद्देश्य सभ्यता और संस्कृति का हस्तांतरण भी यथाचरित्र की शुद्धता संत परंपरा की आवश्यक शर्त थी। असत्य, पाप और गलत आचरण को घृणित माना जाता था। भक्ति, धर्म, अर्थ और मोक्ष की प्राप्ति मुख्य आधार था।

प्राचीन भारत में महिलाओं के लिए शिक्षा का भी काफी महत्त्वपूर्ण स्थान था। स्त्रियों को लौकिक एवं अध्यात्मिक दोनों प्रकार की शिक्षाएँ दी जाती थी। वेदों और वेदांतों का ज्ञान महिलाओं को भी दिया जाता था। भारतीय ज्ञान परंपरा अद्वितीय ज्ञान और प्रज्ञा का प्रतीक है जिसमें सान और विसानु लौकिक ओर परलौकिक, धर्म और धर्म तथा योग और त्याग का अद्भुत समन्वय है। ऋग्वेद के समय से ही शिक्षा प्रणाली जीवन के नैतिक, भौतिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक मूल्यों पर केन्द्रित होकर विनम्रता, सत्यता, अनुशासन और आत्मनिर्भरता और सभी के लिए सम्मान जैसे मूल्यों पर जोर देती थी। वेदों में विद्या को मनुष्यता की श्रेष्ठता का आधार स्वीकार किया गया था।

हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली ने व्यक्ति के सार्वजनिक विकास पर ध्यान केन्द्रित किया तथा उनमुक्ता, सच्चाई, अनुशासन, आत्म निर्भरता और सम्मान जैसे मूल्यों पर बल दिया। एन.ई.पी. 2020 ने न केवल प्राचीन भारत के गौरवशाली अतीत की मान्यता दी है बल्कि प्राचीन भारत के विद्वानों जैसे चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, बराहमिहिर, मैत्रेयी, गार्गी आदि के विचारों को आगे बढ़ाने का काम करेगा। भारत की खोई हुई प्रतिष्ठा को भी स्थापित करेगा।

संत शब्द सत् का एक रूप है। संत में सत्य का बोध होता है। संत सत्य के प्रति अनंत आस्था रखता है। एकनिष्ठ भाव से सत्य के सम्यक दर्शन द्वारा अपने जीवन व खासकर जीव और जगत् के प्रति आदर्श और व्यापक जीवन दृष्टि वाला व्यक्ति ही संतक कल्याण है। संत का स्वरूप ईश्वर सदृश्य होता है। ऋण के आधार पर भाग वत्यरायणता, निरपेक्षता, शांति, समदृष्टि मोह का अभाव अहंकार शून्यता, छीनता और अपरिग्रह आदि गुण रहते हैं, वे संत कहलाते हैं। यही भगवान के बदें समाज में भगवत भक्ति का प्रचार करते हैं। यह प्रचार भिन्न-भिन्न रूप में होता है। जिसे कई परंपराओं के रूप में देखा जा सकता है। तुलसीदास कहते हैं संत के अंदर के काम-लाभ-लोभ-मोह रूपी मनोविकार वही होता ।उनका जीवन तप, व्रत और हृद्य में सदैव वास करते हैं उनकी करुणा हिमालय सदृश्य होती है जो पिघल-पिघलकर अगीत धाराओं में प्रवाहित होती है। यही धाराएँ आगे चलकर संत परंपरा बनी है। सर्वप्रथम कबीरदास ने अपने कुछ विचारों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करना आरंभ किया। संत सेन, पीपा, धन्ना, रैदास आदि भी इन्हीं विचारों से प्रभावित थे। ये सभी संत रामानंद को अपना गुरु मानते थे। इन संतों ने स्वामी रामानंद के उपदेशों से प्रभावित होकर ही संत परंपरा का नेत्रवेश किया। कबीर एवं उनके समकालीन संतों का भाग संत परंपरा का प्रारंभिक युग माना जाता है। इस युग में किसी संप्रदाय विशेष का संगठन नही हुआ था।

हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली ने व्यक्ति के सार्वजनिक विकास पर ध्यान केन्द्रित किया तथा उनमुक्ता, सच्चाई, अनुशासन, आत्म निर्भरता और सम्मान जैसे मूल्यों पर बल दिया। एन.ई.पी. 2020 ने न केवल प्राचीन भारत के गौरवशाली अतीत की मान्यता दी है बल्कि प्राचीन भारत के विद्वानों जैसे चरक, सुश्रुत, आर्यभट्ट, बराहमिहिर, मैत्रेयी, गार्गी आदि के विचारों को आगे बढ़ाने का काम करेगा। भारत की खोई हुई प्रतिष्ठा को भी स्थापित करेगा। ❑